

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178526

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 83.1/T 83B Accession No. G.H. 946

Author त्रिपाठी, सूर्यमान्न

Title ~~विलसु बकरि हा~~ 1941

This book should be returned on or before the date last marked below.

बिल्लेसुर बकरिहा

लेखक

पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी, निराला

मूल्य एक रुपया

प्रकाशक
चौधरी राजेन्द्र शङ्कर
युग-मंदिर, उन्नाव

मुद्रक
पं० भृगुराज भार्गव
भार्गव-प्रिंटिंग-वर्क्स, लखनऊ.

प्राक्कथन

‘बिस्लेसुर बकरिहा’ हास्य लिये एक स्केच है । मुझे विश्वास है,
पाठकों का मनोरंजन होगा ।

लखनऊ
२५ दिसम्बर १९४१

}

निराला

कलाकार—

प्रियबन्धु श्रीअमृतलाल नागर को

स्नेह-भेट

—निराला

विश्वेश्वर बकरिहा

(१)

‘विश्वेश्वर’—नाम का शुद्ध रूप बड़े पते से मालूम हुआ—
‘विश्वेश्वर’ है। पुरवा डिवीज़न में, जहाँ का नाम है, लोकमत विश्वेश्वर-शब्द की ओर है। कारण, पुरवा में उक्त नाम के प्रतिष्ठित शिव हैं। अन्यत्र यह नाम न मिलेगा, इसलिए भाषातत्त्व की दृष्टि से गौरवपूर्ण है। ‘बकरिहा’ जहाँ का शब्द है, वहाँ ‘बोकरिहा’ कहते हैं। वहाँ ‘बकरी’ को ‘बोकरी’ कहते हैं। मैंने इसका हिन्दुस्तानी रूप निकाला है। ‘हा’ का प्रयोग हनन के अर्थ में नहीं, पालन के अर्थ में है।

विश्वेश्वर जाति के ब्राह्मण, ‘तरी’ के सुकुल हैं, खेमेवाले के पुत्र खैयाम की तरह किसी बकरीवाले के पुत्र बकरिहा नहीं। लेकिन तरी के सुकुल को संसार पार करने की तरी नहीं मिली तब बकरी पालने का कारोबार किया। गाँववाले उक्त पदवी से अभिहित करने लगे।

हिन्दी-भाषा-साहित्य में रस का अकाल है, पर हिन्दी बोलनेवालों में नहीं; उनके जीवन में रस की गंगा-जमुना बहती हैं; बीसवीं-सदी-साहित्य की धारा उनके पुराने जीवन में मिलती है। उदाहरण के लिए अकेला विश्वेश्वर का घराना काफ़ी है। विश्वेश्वर चार भाई आधुनिक साहित्य के चारों चरण पूरे कर देते हैं।

विश्वेश्वर के पिता का नाम मुक्ताप्रसाद था; क्यों इतना शुद्ध नाम था, मालूम नहीं; उनके पिता पंडित नहीं थे। मुक्ताप्रसाद के चार

लड़के हुए—मन्त्री, ललई, विल्लेसुर, दुलारे। नाम उन्होंने स्वयं रक्खे, पर ये शुद्ध नाम हैं। उनके पुकारने के नाम गुणानुसार और और हैं। मन्त्री पैदा होकर साल भर के हुए, पिता ने बच्चे को गर्दन उठाये बैठा झपकता देखा तो 'गपुआ' कहकर पुकारना शुरू किया, आदर में 'गप्पू'। दूसरे लड़के ललई की गोराई रोरों में निखर आई थी, आँखें भी कञ्जलोचन, स्वभाव में बदले-बदले, पिता ने नाम रक्खा 'भर्रा' आदर में 'भूरू'। विल्लेसुर के नाम में ही गुण था; पिता 'विलुआ' आदर में 'विल्लू' कहने लगे। दुलारे अपना ईश्वर के यहाँ से खतना कराकर आये थे, पिता को नामकरण में आसानी हुई, 'कटुआ' कहकर पुकारने लगे, आदर में 'कट्टू'।

अभाग्यवश पुत्रों का विकास देखनेसे पहले मुक्ताप्रसाद संसार-बन्धन से मुक्त हो गये। उनकी पत्नी देख-रेख करती रहीं। पर वे भी, पीसकर, चौका-टहल कर, कंडे पाथकर, ढोर छोड़कर, रोटी पकाकर, छोटे से बाग के आम-महुए वीनकर, लड़कों को किसानी के काम में लगाकर ईश्वर के यहाँ चली गईं। उनके न रहने पर चारों भाइयों की एक राय नहीं रही। विवाद काम में विघ्न पैदा करता है। फलतः चार भाई की दो टोलियाँ हुईं। मन्त्री और विल्लेसुर एक तरफ़ हुए, ललई और दुलारे एक तरफ़, जैसे सनातनधर्मी और आर्यसमाजी। कुछ दिन इसी तरह चला। फिर इनमें भी शाखें फूटीं जैसे वैष्णव और शाक्त, वैदिक और वितण्डावादी। फिर सबकी अपनी डफली और अपना राग रहा।

सनातनधर्मानुसार मन्त्री दुखी हुए कि तरी के सुकुल होने के कारण कोई लड़की नहीं ब्याह रहा। पर विवाह आवश्यक है, इस लोक के लिये भी और परलोक के लिये भी। माता-पिता गुज़र गये

हैं, पानी तो उन्हें मिल जाता है, पर माता जीको बड़ियाँ नहीं मिलतीं। बिना गृहिणी के घर में भूत डेरा डालते हैं। विचार के अनुसार मन्त्री बातचीत करते और जहाँ कहीं अनाथ की लड़की देखते थे, डोरे डालते थे। एक जगह लासा लग गया। कहना न होगा, ऐसे विवाह की बातचीत में अत्युक्ति ही प्रधान होता है, अर्थात् भूठ ही अधिक यानी एक पैसे की हैसियत एक लाख की बताई जाती है। मन्त्री के विवाह में ऐसा ही हुआ। लड़की ने माँ का दूध छोड़ा ही था, माँ बेवा थीं, कहा गया, रुपये दो-तीन सौ लेकर क्या करोगी जबकि लड़की को अभी दस साल पालना-पोसना है,—वहीं चलकर रहो, घी-दूध खाओ और रानी की तरह रहकर लड़की की परवरिश करो। बात माँ के दिल में बैठ गई। मन्त्री तब तीस साल के थे; पर चूँकि नाटे क्रुद्ध के थे, इसलिए अट्टारह-उन्नीस की उम्र बतलाई गई। मूछों की वैसी बला न थी। बात खप गई।

मन्त्री के खेतों के पास एक भाड़ी है; कहते हैं, वहाँ देवता भाड़-खण्डेश्वर रहते हैं। एक दिन शाम को मन्त्री धूप-दीप, अक्षत-चन्दन, फूल-फल जल लेकर गये और उकड़ूँ बैठकर उनकी पूजा करते न जाने क्या-क्या कहते रहे। फिर लौटकर प्रसाद पाकर लेटे और पहर रात रहते पुरवा की तरफ चल दिये। एक हफ्ते बाद, बैंगनी साफ़ा बाँधे, एक बेघा और उसकी लड़की को लेकर लौटे। रास्ते में ज़मींदार का खलिहान लगा था, दिखाकर कहा—सब अपनी ही रब्बी है। सासुजी ने मुश्किल से आनन्दातिरेक को रोका। गाँव के बागात देख पड़े। मन्त्री ने हाथ उठाकर बताया—वहाँ से वहाँ तक सब अपनी ही बागें हैं। सासुजी को सन्देह न रहा कि मन्त्री मालदार आदमी है। घर टूटा था। भाइयों से जुदा होकर एक खंडहर

में रहे थे; लेकिन वाग्देवी प्रचण्ड थीं, खण्डहर को भी खिला दिया। पहुँचने से पहले रास्ते में ज़मींदार की हवेली दिखाकर बोले—हमारा असली मकान यह है, लेकिन यहाँ भाई लोग हैं, आपको एकान्त में ले चलते हैं, वहाँ आराम रहेगा, यहाँ आपकी इज्जत न होगी, फिर उसी को हवेली बना लेंगे। सासु ने श्रद्धापूर्वक कहा—हाँ, भय्या, ठीक है, बाहरी आदमियों में रहना अच्छा नहीं। मन्नी खण्डहर में ले गये। इस दिन पसरी भर दूध ले आये। सासुजी लज्जित होकर बोलीं—पे, इतना दूध कौन पियेगा? मन्नी ने गम्भीरता से उत्तर दिया—श्रीटने पर थोड़ा रह जायगा, तीन आदमी हैं, ज्यादा नहीं; फिर अभी कुछ दूध-चीनी शरबत के तौर पर पियेंगे। सासु ने आराम की साँस ली। मन्नी भङ्ग छानते थे। ठाकुरद्वारे में एक गोला पीसकर तैयार किया और चुपचाप ले आये। दूध में शकर मिलाकर गोला घोल दिया। भङ्ग में बादाम की मात्रा काफ़ी थी, सासुजी को अमृत का स्वाद आया, एक साँस में पी गई। मन्नी ने थोड़ी सी अपनी भावी पत्नी को पिलाई, फिर खुद पी। सासुजी हाथ-पैर धोकर बैठीं, मन्नी पूड़ी निकालने लगे। जब तक नशा चढ़े-चढ़े तब तक काम कर लिया। पूड़ी-तरकारी दूध-शकर मिठाई-खटाई बड़ी तत्परता से सासुजी को परोसा। सासुजी को मालूम दिया, मन्नी बड़ी तपस्या के फल मिले। खूब खाया। मन्नी ने पलंग बिछा दिया था, माँ-बेटी लेटीं। मन्नी भोजन करके ईश्वर-स्मरण करने लगे। आधी रात को ज़ोर से गला भाड़ा, पर सासुजी बेखबर रहीं। फिर दरवाज़े पर हाथ दे-दे मारा, पर उन्होंने करवट भी न ली। मन्नी समझ गये कि सुबह से पहले आखें न खोलेंगी। बस, अपनी भावी पत्नी को गले लगाया और भगवान बुद्ध की तरह घर त्यागकर चल

दिये। पत्नी गले लगी सोती रही। सुबह होते-होते मन्त्री ने सात कोस का फ्रासला तै किया। जहाँ पहुँचे वहाँ रिश्तादारी थी। लोग सध गये। सासुजी ने सबेरे हल्ला मचाया। बात खुली। पर चिड़िया उड़ चुकी थी। वे रो-पीटकर शाप देती हुईं कि तू मर जा—तेरी चार-पाई गङ्गाजी जाय, घर चली गईं। मन्त्री शुभ दिन देखकर चुपचाप विवाह कर पत्नी को साथ लेकर परदेश चले गये। पत्नी की दस-बारह साल सेवा की। अब, धर्म की रक्षा करते हुए, बीस साल की अकेली, उसकी माँ की गोद में जैसे एक कन्या छोड़कर स्वर्ग सिधार गये हैं। मन्त्री कट्टर सनातनधर्मी थे।

ललई का दूसरा हाल है। पहले ये भी कलकत्ता बम्बई की खाक छानते फिरे, अन्त में रतलाम में आकर डेरा जमाया। यहाँ एक आदमी से दोस्ती हो गई। कहते हैं, ये गुजराती ब्राह्मण थे। ईश्वर की इच्छा, कुछ दिनों में दोस्त ने सदा के लिये आँखें मँदीं। लाचार, दोस्त के घर का कुल भार ललई ने उठाया। दोस्त का एक परिवार था। पत्नी, दो बेटे, बड़े बेटे की स्त्री। इन सबसे ललई का वही रिश्ता हुआ जो इनके दोस्त का था। इस परिवार में कुछ माल भी था, इसलिये ललई ने परदेश रहने से देश रहना आवश्यक समझा। चूँकि अपने धर्म-कर्म में दृढ़ थे इसलिये लोकनिन्दा और यशःकथा को एकसा समझते थे। अस्तु इन सबको गाँव ले आये। एक साथ पत्नी, दो-दो पुत्र और पुत्रवधू को देखकर लोग एकटक रह गये। इतना बड़ा चमत्कार उन्होंने कभी नहीं देखा था। कहीं सुना भी नहीं था। गाँववालों की दृष्टि ललई पहले ही समझ चुके थे, जानते थे, जिस पर पड़ती है, उसका जल्द निस्तार नहीं होता, इसलिये निस्तार की आशा छोड़कर ही आये थे। गाँव वालों ने

ललई का पान-पानी बन्द किया। ललई ने सोचा, एक खर्च बचा। गाँववाले भी समझे, इसने बेवकूफ़ बनाया, माल ले आया है जिसका कुछ भी खर्च न कराया गया। ललई निर्विकार चित्त से अपने रास्ते आते जाते रहे। मौक़े की ताक में थे। इसी समय आन्दोलन चला। ललई देश के उद्धार में लगे। बड़ा लड़का गुजरात में कहीं नौकर था, खर्चा भेजता रहा। गाँववाले प्रभाव में आ गये। ललई की लाली के आगे उनका असहयोग न टिका। अब मिलने की बातें कर रहे हैं ललई राजनीतिक सुधारक सामाजिक आदमी हैं।

बिल्लेसुर का हाल आगे लिखा जायगा। इनमें विल और ईश्वर दोनों के भाव साथ साथ रहे।

दुलारे आर्यसमाजी थे। वस्तीदीन सुकुल पचास साल की उम्र में एक बेवा ले आये थे। लाने के साल ही भर में उनकी मृत्यु हो गई। दुलारे ने उस बेवा को समझाया, पति के रहते भी तीन साल या तीन महीने खबर न लेने पर पत्नी को दूसरा पति चुनने का अधिकार है। फिर जब वस्तीदीन नहीं रहे तब तीसरे पति के निर्वाचन की उन्हें पूरी स्वतन्त्रता है, और दुलारे उनकी सब तरह सेवा करने को तैयार हैं। स्त्री को एक अवलम्ब चाहिये। वह राज़ी हो गई। लेकिन दुलारे भी साल भर के अन्दर संसार छोड़कर परलोक सिधार गये। पत्नी को हमल रह गया था, बच्चा हुआ। अब वह नारद की तरह ललई के दरवाज़े बैठा खेला करता है। माँ नहीं रही।

मन्नी मार्ग दिखा गये थे, बिल्लेसुर पीछे-पीछे चले। गाँव में

सुना था, बङ्गाल का पैसा टिकता है, बम्बई का नहीं, इसलिये बङ्गाल की तरफ़ देखा। पास के गाँवों के कुछ लोग बर्दवान के महाराज के यहाँ थे सिपाही, अर्दली, जमादार। विल्लेसुर ने साँस रोककर निश्चय किया, बर्दवान चलेंगे। लेकिन खर्च न था। पर प्रगतिशील को कौन रोकता है? यद्यपि उस समय वोल्शेविज़्म का कुछ ही लोगों ने नाम सुना था, विल्लेसुर को आज भी नहीं मालूम, फिर भी आइडिया अपने आप विल्लेसुर के मस्तिष्क में आ गई। वे उसी फटे हाल कानपुर गये। बिना टिकट कटायें कलकत्तावाली गाड़ी पर बैठ गये। इलाहाबाद पहुँचते-पहुँचते चंकर ने कान पकड़कर गाड़ी से उतार दिया। विल्लेसुर हिन्दुस्तान के जलवायु के अनुसार सविनय क़ानून-भङ्ग कर रहे थे, कुछ बोले नहीं, चुपचाप उतर आये; लेकिन सिद्धान्त नहीं छोड़ा। प्लैटफ़ॉर्म पर चलते-फिरते समझते-बूझते रहे। जब पूरब जाने वाली दूसरी गाड़ी आई, बैठ गये। मोगलसराय तक फिर उतारे गये; लेकिन, दो-तीन दिन में, चढ़ते-उतरते, बर्दवान पहुँच गये।

पं० सत्तीदीन सुकुल, महाराज, बर्दवान के, यहाँ जमादार थे। यद्यपि बङ्गालियों को 'सत्तीदीन' शब्द के उच्चारण में अड़चन थी, वे 'सत्यदीन' या 'सतीदीन' कहते थे, फिर भी 'सत्तीदीन' की उन्नति में वे कोई बाधा नहीं पहुँचा सके। अपनी अपार मूर्खता के कारण सत्तीदीन महाराज के खज़ाञ्ची हो गये, आधे; आधे इसलिये कि ताली सत्तीदीन के पास रहती थी, खाता एक दूसरे बावू लिखते थे। सत्तीदीन इसे अपने एकान्त विश्वासी होने का कारण समझते थे। दूसरे हिन्दोस्तानियों पर भी इस मर्यादा का प्रभाव पड़ा। विल्लेसुर समझ-बूझकर इनकी शरण में गये। सत्तीदीन सखीक

रहते थे। दो-तीन गायें पाल रक्खी थीं। स्त्री 'शिखरिदशना' थीं यानी सामने के दो दांत आवश्यकता से अधिक बड़े थे। होठों से कोशिश करने पर भी न बन्द होते थे। पैरू के सुकुल। कनवजियापन में विल्लेसुर से बहुत बड़े। फलतः विल्लेसुर को यहाँ सब तरह अपनी रक्षा देख पड़ी।

विल्लेसुर सत्तीदीन के यहाँ रहने लगे। ऐसी हालत में गरीब की तहजीब जैसी, दबे पाँव, पेट खलाये, रीढ़ भुकाये, आँखें नीची किये आते जाते रहे। उठते जोयन में सत्तीदीन की स्त्री को एक सुहलानेवाला मिला। दो-तीन दिन तक भोजन न खला। एक दिन औरत वाले कोटे जी गया। नक्की सुरों में बोलीं, "मैं कहती हूँ, विल्लेसुर, तुम तो आ ही गये हो, और अभी हो ही, इस चरवाहे को विदा क्यों न कर दूँ ? हराम का पैसा खाता है। कोई काम है ? घास खड़ी है, दो बोझ काट लानी है ; नहीं, पैरे की बँधी मूठें हैं— यहाँ वहाँ का जैसा धान का पैरा नहीं—बड़ा बड़ा कतर देता है और थोड़ी सी सानी कर देनी है ; देश में जैसे डंडा लिये यहाँ ढोरों के पीछे नहीं पड़ा रहना पड़ता, लम्बी लम्बी रस्सियाँ हैं, तीन गायें हैं, घास खड़ी है, बस ले गये और खँटा गाड़कर बाँध दिया, गायें चरती रहीं, शाम को बाबू की तरह टहलते हुए गये और ले आये, दूध दुह लिया रात को मच्छड़ लगते हैं, गीले पैरे का धुवाँ दे दिया; कहने में तो दूर भी लगी।' कहकर सत्तीदीन की स्त्री ने कनपटी घुमाई और दोनों होंठ सटाने शुरू किये।

विल्लेसुर चौकन्ने। ढोर चराने के लिये समन्दर पार नहीं किया। यह काम गाँव में भी था। लेकिन परदेश है। अपना कोई नहीं। दूसरे के सहारे पार लगाना है। सोचा,

तब तक कर लें; नौकरी न लगी तो घर का रास्ता नापेंगे।

बिल्लेसुर को जवाब देते देर हुई। सत्तीदीन की स्त्री ने कनपटी घुमाई कि बिल्लेसुर बोले—‘कौन बड़ा काम है? काम के लिए ही तो आया हूँ सात सौ कोस—देस सात सौ कोस तां होगा?’

बिल्लेसुर के निश्चय पर जमकर सत्तीदीन की स्त्री ने कहा, ‘ज्यादा होगा’। कानपुर की वर्दवान की दूरी। सोचकर बोली, ‘जमादार आयेंगे तो पूछूँगी, उनकी किताब में सब लिखा है।’

बिल्लेसुर खामोश रहे। मन में किस्मत को भला बुरा कहते रहे।

शाम को जमादार आये। भोजन तैयार था। स्त्री ने पैर धुला दिये। जमादार पाटे पर बैठे। स्त्री दिन को मक्खियाँ उड़ाती हैं, रात को सामने बैठी रहती हैं। जमादार भोजन करने लगे। स्त्री ने कहा ‘जमादार, बिल्लेसुर कहते हैं, अपना देस यहाँ से सात सौ कोस है, मैं कहती हूँ, और होगा। तुम्हारी किताब में तो सब कुछ लिखा है?’

सत्तीदीन को एक डाइरी मिली थी। डाइरी भी वही बाबू लिखता था। लिखने के विषय के अलावा और क्या क्या उसमें लिखा है, सत्तीदीन उस बाबू से कभी कभी पढ़ाकर समझते थे। सत्तीदीन ने सोचा, महाराज ने ऊँचा पद तो दिया ही है, संसार को भी उनकी मुट्ठी में बेर की तरह डाल दिया है। कई रोज़ वह किताब घर ले आये थे, और वहाँ जो कुछ सुना था, जितना याद था, ज़बानी स्त्री को सुनाया था।

बायें हाथ से मूँछों पर ताव देते हुए, मुँह का नेवाला निगलकर

सत्तीदीन ने कहा, 'सात सौ कांस इलाहाबाद तक पूरा हो जाता है।' उनकी स्त्री चमकती आँखों से विल्लेसुर को देखाने लगीं। विल्लेसुर हार मानकर बोले—'जब किताब में लिखा है तो यही ठीक होगा।'

पति को प्रसन्न देखकर पत्नी ने अर्ज़ी पेश की जिस तरह पहले बड़े आदमियों का मिज़ाज परखा जाता था, फिर बात कही जाती थी। विल्लेसुर गर्जमन्द की वावली निगाह से देखते रहे। सत्तीदीन ने उसमें एक सुधार की जगह निकाली, कहा 'विल्लेसुर अपने आदमी है इसमें शक नहीं, लेकिन इसमें भी शक नहीं कि उस छोकरड़े से ज्यादा खायेंगे। हम तनख्वाह न देंगे। दोनों वक्त खा लें। तनख्वाह की जगह हम तहसील के जमादार से कह देंगे, वे इन्हें गुमाशतों के नाम तहसील की चिट्ठियाँ देते रहें, ये चार-पाँच घण्टे में लगा आयेंगे, इन्हें चार-पाँच रुपये महीने मिल जाया करेंगे, हमारा काम भी करते रहेंगे।'

सत्तीदीन की स्त्री ने किये उपकार की निगाह से विल्लेसुर को देखा। विल्लेसुर ख़राक और चार-पाँच का महीना सोचकर अपने धनत्व को दवा रहे थे, इतने से आगे बहुत कुछ करेंगे। सोचते हुए उन्होंने सत्तीदीन की स्त्री से हामी की आँख मिलाई।

जमादार गम्भीर भाव से उठकर हाथ-मुह धोने लगे।

(३)

विल्लेसुर जीवन-संग्राम में उतरे। पहले गायों के काम की बहुत-सी बातें न कही गई थीं, वे सामने आईं। गोबर उठाना, जगह साफ़ करना, मूत पर राख छोड़ना, कंडे पाथना, कभी कभी गायों को नहलाना आदि भीतरी बहुत सी बातें थीं। दरअसल

फुर्सत न मिलती थी। पर बिना चिट्ठी लगाये पूरा न पड़ता था। पास-पास की चिट्ठियाँ मिलती थीं, जैसा सत्तीदीन कह गये थे। एक चिट्ठी के तीन आने मिलते थे। कुछ दिनों में विल्लेसुर को मालूम हुआ, दूर की चिट्ठी में दूना मिलता है। उन्होंने हाथ बढ़ाया। तहसील के जमादार ने कहा, न तुम नौकर हो, न किसी की पवज़ पर हो, फिर सत्तीदीन ने मना किया है, दूर की चिट्ठी हम न देंगे। विल्लेसुर पैरों पड़े, कहा, नौकर तो आप ही करेंगे, तब तक दूरवाली चिट्ठी भी दें, मैं बारह कोस छः घण्टे में जाऊँगा-आऊँगा। जमादार चिट्ठी देने लगे।

चिट्ठी लगाना सत्तीदीन की स्त्री को अखरता था। विल्लेसुर लौटकर सदा चढ़ी त्योंगियाँ देखते थे। गोकि काम में कसर न रहती थी। दस बजे तक कुल काम कर जाते थे। लौटकर गायों को खोल लाते थे और रात नौ बजे तक उनके पीछे लगे रहते थे। फिर भी सत्तीदीन की स्त्री की शिकन न मिटती थी। दूसरा नौकर भी न रक्खा, क्योंकि विल्लेसुर सस्ते थे। बातें कभी कभी सुनाती थीं जो कानों को प्यारी न थीं, और उनसे पेट की आतें निकलने को होती थीं। विल्लेसुर बरदाश्त करते थे। गरमी के दिनों में दस-बारह बजे तक घर का कुछ काम करते थे, फिर चिट्ठी लगाते हुए, देर हुई सोचकर धूप में, नंगे सिर, बिना छाता, दौड़ते हुए रास्ता पार करते थे। लौटते थे, हाँफते हुए, मुँह का थूक सूखा हुआ, होंठ सिमटे हुए, पसीने-पसीने, दिल धड़कता हुआ, यहाँ का बाक़ी काम करने के लिये। पहुँचकर ज़मीन पर ज़रा बैठते थे कि सत्तीदीन की स्त्री पूछती थीं, कितना कमा लाये विल्लेसुर? ज़वान बुरी से पैनी, मतलब हलाल करता हुआ। विल्लेसुर उस गरमी

में बनावटी नरमी लाते हुए, खीस निपोड़कर जवाब देते हुए, ज़रा सुस्ताकर गायों के पीछे तरह तरह के काम में दौड़ते हुए ।

उन दिनों कइयों से बिल्लेसुर कह चुके, मर्द से औरत होना अच्छा । कोई नहीं सम्झा । बिल्लेसुर सूखे होठों की हार खाई हँसी हँसकर रह गये ।

गाँव में भी बिल्लेसुर की बरदाश्त करने की आदत पड़ी थी । कभी कुछ बोले नहीं । अपनी ज़िन्दगी की किताब पढ़ते गये । किसी भी वैज्ञानिक से बढ़कर नास्तिक ।

बिल्लेसुर दूसरे का अविश्वास करते करते एक खास शकल के बन गये थे । पर अपना बल न छोड़ा था, जैसे अकेले तैराक हों । सत्तीदीन की स्त्री को न मालूम होने दिया कि दूर की कौड़ी लाते हैं । बारह कोस की दौड़ छुः कोस की रही । दुनिया को खुश करने की नस टोये पा चुके थे ; दम साधे, दवाते हुए कई महीने खे गये । एक दिन जमादार को खुश देखकर बोले, 'वावा; अब नौकरी लगा देते !'

उन्होंने कहा, 'अच्छा, कल नाप देना ।'

बिल्लेसुर मन्त्री के भाई थे, पाँच फ़ीट से कुछ ही ऊपर । जानते थे, ऊँचाई घटेगी । तरकीब निकाली । चमरौधा जूता था डेढ़ इंच से कुछ ज्यादा ऊँचे तले का । उसमें रुई की गद्दी लगाई । पहनकर खड़े हुए तो जैसे ईंटों पर खड़े हों । लेकिन भँपे नहीं, न डरे, जैसे फ़र्ज़ अदा कर रहे हों, गये । कचहरी में लट्टु लाकर लगाया गया । बिल्लेसुर ने आँख उठाई कि देखें, पूरे हो गये । नापनेवाले ने कहा, डेढ़ इंच घटा ।

बिल्लेसुर ने जमादार को उड़ी निगाह से देखा । साथ आरज़ू-

मिन्नत । जमादार मुस्कराये । कहा, 'बिल्लेसुर, तुम नौकर नहीं हो सकते, लेकिन कोई-न-कोई सिपाही छुट्टी पर रहता है, जगह तुम्हें मिलती रहेगी, बिना तनख्वाह की छुट्टी वाले की तनख्वाह भी ।'

बिल्लेसुर तरक्की की सोचकर मुस्कराये ।

एक साल बीत गया ।

(४)

सत्तीदीन की स्त्री को आये कई साल हो गये, उन्होंने जगन्नाथजी के दर्शन नहीं किये । पैसा पास न था । एक दिन जमादार से बोलीं, 'जमादार, पैसा तो पास है, लेकिन लड़का बच्चा कोई नहीं । हमारे-तुम्हारे बाद पैसा अकारथ जायगा । इतने दिन आये हुए, अभी जगन्नाथजी के दर्शन नहीं हुए । अबके सोचती हूँ, बाबा के दर्शन करूँ और कहूँ, बाबा मेरी गोद भर दो तो तुम्हारे चरणों पर लोटकर तुम्हारी एक सौ एक रुपये की शिरनी चढ़ाऊँ । मेरा जी कहता है, बाबा मेरी मनोकामना पूरी करेंगे । देश-देश के लोग जाते हैं, मुँहमाँगा वरदान उन्हें मिलता है, भगवान ही हैं—अरे हाँ—जो कर, थोड़ा । फिर न जाने क्या सोचकर सत्तीदीन की स्त्री फूट-फूटकर रोने लगी, फिर अपने हाथ आँस पोंछकर हिचकियाँ लेती हुई बोलीं, 'मुझे सब सुख है । जैसा अच्छा घर मिला, वैसा अच्छा घर; धन है, मान है, गहने हैं, कपड़े हैं, दूध से भरी हूँ, लेकिन ऊँ हूँ हूँ—' फिर रोदन, यानी पूत नहीं ।

सत्तीदीन ने छाती से लगाकर कहा, 'अभी तुम्हारी कोई उमर हो गई है ? पहली होती तो एक बात होती । वे तो बेचारी चक्की

पीसती हुई चली गई। पाँच साल हुए तुम्हें ब्याह कर लाया हूँ। अब तुम्हारी उम्र बीस साल की होगी ?

सिसकियाँ लेते हुए स्त्री ने कहा, 'उन्नीसवाँ चल रहा है।' हालां कि उनकी उम्र पच्चीस साल से ऊपर थी।

'फिर ?' सत्तीदीन ने कहा, 'इतनी उतावली क्यों होती हो ? मैं भी अभी बुढ़ा नहीं। लड़के-बच्चे जब आते हैं, अपने आप आते हैं।'

'ऐसा न कहो', स्त्री ने कहा, 'कहो, जगन्नाथ जी की कृपा से आते हैं।'

सत्तीदीन गम्भीर हो गये; बोले 'जगन्नाथजी की कृपा सब तरफ़ है। ऊँचा ओहदा मिला है, यह भी जगन्नाथजी की कृपा है; और उनके दर्शन हम रोज़ करते हैं मन में, रही बात उनकी पुरी में जाने की, सो चले चलेंगे, दस दिन की छुट्टी ले लेंगे। यह कौन बड़ी बात है ?

स्त्री को ढाढस बँधा। इसी समय बिल्लेसुर आये। जमादार ने पूछा, 'बिल्लेसुर, जगन्नाथ जी चलोगे ?'

बिल्लेसुर खरचा नहीं लगाना चाहते थे। सत्तीदीन समझ गये। लेकिन बिल्लेसुर के पास होगा भी कितना, सोचकर कहा, 'अच्छा, अपनी छुट्टी मंजूर करा लेना दस दिन की, अगले इतवार को चलेंगे।' सत्तीदीन को साथ एक नौकर चाहिये था।

बिल्लेसुर जब दूसरे की पवज़ में काम करने लगे, तब कचहरी की लगातार हाज़िरी ज़रूरी हो गई। सत्तीदीन को गायों के काम के लिये दूसरा नौकर रखना पड़ा। बाहर का बहुत सा काम बिल्लेसुर कर देते थे, यों वे अब अलग रहते थे, अलग पकाते खाते थे।

फोकट में जगन्नाथ जी के दर्शन होंगे, बिल्लेसुर के आनन्द का आरपार न रहा। उन्होंने छुट्टी मंजूर करा ली। अगले इतवार के दिन सत्तीदीन के सामान के रत्नक के रूप से जगन्नाथ जी के दर्शनों के लिये सत्तीदीन और उनकी स्त्री के साथ रवाना हुए।

जिस तरह सत्तीदीन की स्त्री का विश्वास था कि जगन्नाथ जी की कृपा की दृष्टि पड़ते ही वे गर्भिणी हो जायँगी, उसी तरह बिल्लेसुर का विश्वास था कि सत्तीदीन की इच्छामात्र से उनकी नौकरी स्थायी हो जायगी, चाहे वे डेढ़ इंच का जगह बालिशत भर छोटे पड़ें।

अपने विश्वास को फलीभूत करने का उपाय बिल्लेसुर रास्ते में सोचते गये।

पुरी पहुँचकर बहुत खुश हुए। ऐसा दृश्य कानपुर से बर्दवान तक न देखा था। समन्दर का किनारा—बालू के दूह—देखकर बहुत खुश हुए, समुद्र देखकर जामे से बाहर हो गये। जगन्नाथ जी की स्मृति में बहुत से घोंघे समुद्र के किनारे से चुनकर रख लिये, कुछ छोटे छोटे शंख-से।

मार्काण्डेय, वटकृष्ण, चन्दनतालाब आदि प्रसिद्ध जगहें देखते फिरे। मन्दिर के अहाते में और छोटे छोटे मन्दिर हैं। एक एक देखते फिरे। एकादशी को एक जगह उल्टा टंगी देखकर हँसे। सत्तीदीन ने कहा 'बाबा के प्रताप से यहाँ एकादशी उल्टा टाँग ही गई हैं; यहाँ कोई एकादशी का व्रत नहीं कर सकता। बिल्लेसुर ने उन्हें भी हाथ जोड़कर प्रणाम किया। फिर सब लोग कलियुग की मूर्ति देखने गये। कलियुग अपनी बीबी को कन्धे पर बैठाये बाप को पैदल चला रहा है। सत्तीदीन की स्त्री गौर से देखती

रहीं। कई रोज़ बड़ आनन्द से कटे। भुवनेश्वर चलने की तैयारी हुई।

जगन्नाथ जी में जूठा नहीं होता, या दूसरे की जूठन खाना प्रचलित है। इधर के लोग जिन्हें चौके की क़ैद माननी पड़ती है, वहाँ खुलकर एक दूसरे की जूठन खाते हैं। कोई बुरा नहीं मानता। बिल्लेसुर ने जमादार और जमादारिन की पत्तलों में अपने जूठे हाथ से भात उठाकर डाल दिया। वे कुछ न बोले, बल्कि खाते हुए हँसते रहे।

दो दिन बीत जाने पर की बात है, जमादार नहा चुके थे, बिल्लेसुर भी नहाकर आये। आकर सीधे जमादार के पास गये और उनके पैर पकड़ कर पेट के बल लेट गये। 'क्या है बिल्लेसुर? क्या है बिल्लेसुर?' जमादार शंका की दृष्टि से देखते हुए पूछने लगे। बिल्लेसुर ने करुण स्वर से कहा, 'कुछ नहीं, बाबा, मेरा भवसागर से उद्धार करो।'।

भवसागर से उद्धार हम कैसे करें, बिल्लेसुर? क्या हो गया है? सत्तीदीन विचलित हो गये।

पैर पकड़े हुए ही बिल्लेसुर ने कहा, 'बाबा, मुझे गुरुमन्त्र दो!'।

'अरे, गुरु यहाँ एक-से-एक बड़े हैं, छोड़ो पाँव, उनमें जिससे चाहो, मन्त्र ले लो।' सत्तीदीन ने पैर छुड़ाने को किया।

'मेरी निगाह में तुमसे बड़ा कोई नहीं। तुम मुझ पर दया करो।' पैर पकड़े हुए बिल्लेसुर ने पैरों पर माथा रख दिया।

'मुझे तो कोई गुरुमन्त्र आता ही नहीं। सिर्फ़ गायत्री आती है।' विकल होकर सत्तीदीन ने कहा।

'बाबा, गायत्री से बड़ा गुरुमन्त्र और कोई नहीं। मैं यही मन्त्र लूँगा।'।

‘अरे, गायत्री तो जनेऊ होते वक्त तुम सुन चुके हो।’

‘मैं भूल गया हूँ। तुम्हारे पैर लूकर कहता हूँ। कल मैंने सपना देखा है कि बाबा जगन्नाथ जी कहते हैं.....लेकिन कहूँगा तो सपना फलियायगा नहीं।’

स्वप्न की बात से सत्तीदीन की स्त्री रोमाञ्चित हुई। विल्लेसुर बाज़ी मार ले गया, सोचा। पुकार कर कहा, ‘विल्लेसुर, पैर छोड़ दो। तुम्हें बाबा का सपना हुआ है, तो मैं कहती हूँ, जमादार गुरुमन्त्र देंगे। यहाँ आओ, अकेले मैं मुझसे बताओ कि क्या सपना देखा।’

बात पाकर विल्लेसुर ने पैर छोड़ दिये। सत्तीदीन की स्त्री कोठरी की तरफ़ बढ़ी। विल्लेसुर साथ साथ गये। वहाँ जाकर कहा, ‘मैं सोता था, सोता था, देखा भुस्स से एक आग जल उठी, उसमें तीन मुँह वाला एक आदमी बैठा था, उसने कहा, विल्लेसुर, तू गरीब ब्राह्मण है, सताया हुआ है, लेकिन घबड़ा मत, तू जिसके साथ आया है, उनकी सेवा कर, उनसे गुरुमन्त्र ले ले, तू दूधों-पूतों फलेगा। फिर देखता हूँ तो कहीं कुछ नहीं।’

सत्तीदीन की स्त्री ने निश्चय किया, फल उल्टा हुआ। यह सपना दरअसल उन्हें होना था। कोई खता न हो गई हो। हर सोमवार बाबा के नाम घी की बत्ती देने का सङ्कल्प किया। फिर सत्तीदीन से मन्त्र दे देने के लिये कहा। सत्तीदीन ने करठी, माला, मिठाई, अँगोठ्या आदि बाज़ार से खरीद लाने के लिये विल्लेसुर से कहा। विल्लेसुर गये, क्षण भर में खरीद लाये। सत्तीदीन ने गायत्री मंत्र से पुनर्वार विल्लेसुर को दीक्षित किया।

विल्लेसुर की श्रद्धालु आँखों का प्रभाव सत्तीदीन की स्त्री पर

पड़ा। जगन्नाथ-दर्शन बिल्लेसुर के मुकाबिले उनका फीका रहा सोचकर जमादार से बोलीं, 'जमादार, मैं कहती हूँ, मंत्र मैं भी क्यों न ले लूँ।' जमादार ने कहा, 'अच्छा, पराडा जी आवें, तो पूछ लें।' ईश्वर की इच्छा से पराडा जी कुछ ही देर में आ गये। सत्तीदीन ने पूछा। पराडा जी ने सत्तीदीन की स्त्री को देखा और कहा 'अभी तुम रख नहीं सकेगा। अभी तो तुमको मासिक धर्म होता है।'

सत्तीदीन की स्त्री कटी निगाह देखती रही। पराडा जी ने सत्तीदीन को सलाह दी कि चौथेपन में गुरुमन्त्र लेना लाभदायक होता है। जब तक स्त्री को मासिक धर्म होता है तब तक वह मंत्र की रक्षा नहीं कर सकती, अशुद्ध रहती है और तरह तरह से पैर फिसलने की सम्भावना है। सत्तीदीन मान गये।

वहाँ से भुवनेश्वर गये, फिर वर्दवान वापस आये।

(५)

सत्तीदीन की स्त्री एक साल तक जगन्नाथ जी की शक्तिकी परीक्षा करती रहीं। हर सोमवार को घी का दिया देती थीं; और हर महीने के अन्त तक प्रतीक्षा करती थीं। लेकिन कोई फल न हुआ।

बिल्लेसुर की क्रिया-काष्ठा बहुत बढ़ गई। तिलक, माला और गायत्री के धारण से उनकी प्रखरता दिन पर दिन निखरती गई।

जब एक साल तक पुत्र-विषय में बाबा जगन्नाथ जी ने कृपा न की तब सत्तीदीन की स्त्री का देवता पर कोप चढ़ा और वे दिव्य शक्ति की पत्नीपातिनी बन गई; यथार्थवादी लेखक की तरह।

बिल्लेसुर को बड़ी ग्लानि हुई। उनके गुरुमंत्र का लोग मज़ाक उड़ाते थे। उनकी हालत में भी कोई सुधार नहीं हुआ। उन्होंने

निश्चय किया, देश चलकर रहेंगे, ज़मींदार की गुलामी से गुरु की गुलामी सख्त है, यहाँ से वहाँ की आबोहवा अच्छी, अपने आदमी बोलने-बतलाने के लिये हैं, अब यहाँ नहीं रहेंगे।

गुरुआइन का यथार्थवाद भी बिल्लेसुर को खला। एक दिन वे अपनी कण्ठी और माला लेकर गये और गुरुआइन के सामने रखकर कहा, “मैंने देश जाने की छुट्टी ली है। लौटूँ या न लौटूँ, कहने को क्यों रहे, यह माला है और यह कंठी, लो, अब मैं चेला नहीं रहूँगा, जैसे गुरु वैसी तुम, यह तुम्हारा मन्त्र है।”

कहकर गायत्री-मन्त्र की आवृत्ति कर गये और सुनाकर चल दिये, फिर पैर भी नहीं छुए।

(६)

बिल्लेसुर गाँव आये। अंटी में रुपये थे, होठों में मुसकान। गाँव के ज़मींदार, महाजन, पड़ोसी, सब की निगाह पर चढ़ गये—सबके अन्दाज़ लड़ने लगे—“कितना रुपया ले आया है।” लोगों के मन की मन्दाकिनी में अव्यक्त ध्वनि थी—बिल्लेसुर रुपयों से हाथ धोयें! रात को लाठी के सहारे कच्चे मकान की छत पर चढ़कर, आँगन में उतरकर, रक्खा सामान और कपड़े-लत्ते उठा ले जानेवाले चोर इस ताक में रहने लगे कि मौक़ा मिले तो हाथ मारें। एक दिन मन्सूबा गाँठकर त्रिलोचन मिले और अपनी झानवाली आँख खोलकर बड़े अपनाव से बिल्लेसुर से बातचीत करने लगे—“क्यों बिल्लेसुर, अब गाँव में रहने का इरादा है या फिर चले जाओगे?”

बिल्लेसुर त्रिलोचन के पिता तक का इतिहास कण्ठाग्र किये थे, सिर्फ़ हिन्दी के ब्लैक वर्स के श्रेष्ठ कवि की तरह किसी सम्मेलन या घर की बैठक में आवृत्ति करके सुनाते न थे। मुस्कराते हुए नरमी से

बोले—“भय्या, अब तो गाँव में रहने का इरादा है—बंगाल का पानी बड़ा लागन है।”

त्रिलोचन के तीसरे नेत्र में और चमक आ गई। एक कदम बढ़ कर और निकट होते हुए, सामीप्यवाले भक्त के सहानुभूतिसूचक स्वर से बोले—“बड़ा अच्छा है, बड़ा अच्छा है। काम कौन-सा करोगे?”

“अभी तक कुछ विचार नहीं किया।” विल्लेसुर वैस ही मुस्कराते हुए बोले।

“बिना सोते के कुआ सूख जाता है। बैठे-बैठे कितने दिन खाओगे?”

“सही-सही कहता हूँ। अभी तो ऐसे ही दिन कटते हैं।”

“ऐसा न कहना। गाँव के लोग बड़ पाजी हैं। पुलिस में रपोट कर देंगे तो बदमाशी में नाम लिख जायगा। कहा करो, जब चुक जायगा तब फिर कमा लायेंगे।”

विल्लेसुर सिटपिटाये। कहा, “हाँ भय्या, आजकल होम करते हाथ जलता है। लोग समझेंगे, जब कुछ है ही नहीं तब खाता क्या है?—चोरी करता होगा।”

त्रिलोचन ने सोचा, परले दरजे का चालाक है, कहीं कुछ खोलता ही नहीं। खुलकर बोले, “हाँ, दीनानाथ इसी तरह बहुत खीस निपो-ढकर बातचीत किया करते थे, अब लिख गये बदमाशी में; रात को निगरानी हुआ करती है।”

विल्लेसुर फिर भी पकड़ में न आये। कहा, ‘पुलिसवाले आँखें देखकर पहचान लेते हैं—कौन भला आदमी है, कौन बुरा। अपने खेत में रामदीन को बंटाई में देकर गया था। वही खेत लेकर किसानी करूँगा।”

त्रिलोचन को थोड़ी-सी पकड़ मिली। कहा, “हाँ, यह तो अच्छा विचार है। लेकिन तुम्हारे बैल तो हैं ही नहीं, किसानी कैसे करोगे?”

विल्लेसुर पेच में पड़े। कहा, “इसीलिये तो कहा था कि अभी तक कुछ तै नहीं कर पाया।”

त्रिलोचन का पारा चढ़ना ही चाहता था, लेकिन पारा चढ़ने से खरी-खोटी सुनाकर अलग हो जाने के अलावा और कोई स्वार्थ न सधेगा, सोचकर मुश्किल से उन्होंने अपने को यथार्थ कहने से रोका, और बड़े धैर्य से कहा, “हमारे बैल ले लो।”

“फिर तुम क्या करोगे?”

“हम और बड़ी गोई लेना चाहते हैं। लेकिन सौ रुपये लेंगे।”

विल्लेसुर ने निश्चय किया, सौ रुपये ज्यादा नहीं हैं। कहा, “अच्छा, कल बतलायेंगे।”

त्रिलोचन एक काम है, कहकर चले। मन में निश्चय हो गया कि सौ रुपये एकमुश्त देनेवाले विल्लेसुर के पास पाँच-सात सौ रुपये ज़रूर होंगे। त्रिलोचन दूसरी जगह सलाह करने गये कि किस उपाय से वह रुपये निकाले जायँ।

विल्लेसुर त्रिलोचन के जाने के साथ घर के भीतर गये और कुछ देर में तैयार होकर बाहर के लिये निकले। लोगों ने पूछा, कहाँ जाते हो विल्लेसुर? विल्लेसुर ने कहा, पटवारी के यहाँ।

शाम होते-होते लोगों ने देखा, तीन बड़ी-बड़ी गाभिन बकरियाँ लिये विल्लेसुर एक आदमी के साथ आ रहे हैं। गाँव भर में हल्ला हो गया, विल्लेसुर तीन बकरियाँ ले आये हैं। स्वयं एक-एक लम्बी साँस छोड़ी।

बकरियों का समाचार पाकर त्रिलोचन फिर आये। कहा, बकरी ले आये, अच्छा किया, अब ढोर काफ़ी हो जायँगे। बिल्लेसुर ने कहा, “हाँ, बैलोंवाला विचार अब छोड़ दिया है, कौन हमारे सानी-पानी करेगा? बकरियों को पत्ते काटकर डाल दूँगा। बैलों को बाँधकर बैल ही बना रहना पड़ता है।”

“और किसानी?”

“बंटाई में है, साभे में कर लेंगे।”

(७)

बिल्लेसुर ने लम्बे पतले बाँस के लग्गे में हँसिया बाँधा, बड़ाकर गूलड़-पीपल-पाकर आदि पेड़ों की टहनियाँ छाँटकर बकरियों को चराने के लिये। तैयारी करते दिन चढ़ आया। बिल्लेसुर गाँव के रास्ते बकरियों को लेकर निकले। रामदीन मिले, कहा, “ब्राह्मण होकर बकरी पालोगे? लेकिन हैं बड़ी अच्छी बकरियाँ, खूब दूध देंगी, अब दो साल में बकरी-बकरी से घर भर जायगा, आमदनी काफ़ी होगी।” कहकर लोभी निगाह से बकरियों को देखते रहे। रास्ते पर जवाब देना बिल्लेसुर को वैसा आवश्यक नहीं मालूम दिया। साँस रोके चले गये। मन में कहा, “जब ज़रूरत पर ब्राह्मण को हल की मूठ पकड़नी पड़ी है, जूते की दूकान खोलनी पड़ी है, तब बकरी पालना कौन बुरा काम है?” ललई कुम्हार अपना चाक चला रहे थे, बकरियों को देखकर एक कामरेड के स्वर से बिल्लेसुर का उत्साह बढ़ाया। बिल्लेसुर प्रसन्न होकर आगे बढ़े। आगे मन्दिर था। भीतर महादेव जी, बाहर पीछे की तरफ़ महावीर जी प्रतिष्ठित थे। जब भी बिल्लेसुर गुरुमन्त्र छोड़ चुके थे, फिर भी बकरियों की भेड़िये से कल्याण-कामना किये बिना नहीं

रहा गया—मन्दिर में गये। उन्हें महादेव जी से महावीर जी अधिक शक्ति वाले मालूम दिये। यह भी हो सकता है कि बाहर महावीर जी के पास जाने से वे गलियारे से जाती हुई बकरियों को भी देख सकते थे। अस्तु महावीर जी के पैर छू कर, मन-ही-मन उन्होंने कुछ कहा और फिर अपनी बकरियों का पीछा पकड़ा। खेत की हरियाली की तरफ लपकती बकरी को हटककर सामने लक्ष्य स्थिर करके बढ़े। मन्नू का पक्का कुआँ आया। गलियारे में ही खड़े खड़े लग्गा बढ़ाकर गलियारे पर आती पीपल की निचली डाल से टहनियाँ छाँटने लगे। टहनियों के गिरते ही बकरियाँ पत्तियों से जुट गईं। ज़रूरत भर लच्छियाँ छाँटकर लग्गा डाल के सहारे खड़ा कर बिल्लेसुर कुए की जगत पर चढ़कर बैठे बकरियों को देखते हुए। सामने पड़ती ज़मीन थी। बगल से एक बरसाती नाला निकला था। चरवाहे लड़के वहीं ढोर लिये इधर उधर खड़े थे। बिल्लेसुर को देखा। उनकी बकरियों को देखा। भगाने की सूभी। सयाने लड़कों ने सलाह की। बात तै हो गई कि खेदकर नाले में कर दिया जाय। बिल्लेसुर परेशान होंगे, खोजेंगे। मिलेंगी, मिलेंगी; न मिलेंगी, बला से। एक ने कहा, पासियों को खबर कर दी जाय तो नाले में मारकर निकोलेंगे, कुछ मास हमें भी मिलेगा। दूसरे ने कहा, गाभिन हैं, किस काम का मास। फिर भी बकरियों को भगाने का लोभ लड़कों से न रोका गया। सलाह करके कुछ बाहर तके रहे, कुछ बिल्लेसुर के पास गये। एक ने कहा, “काका, आओ, कुछ खेला जाय।” बिल्लेसुर मुस्कराये। कहा, “अपने बाप को बुला लाओ, तुम क्या हमारे साथ खेलोगे?” फिर सतर्क दृष्टि से बकरियों को देखते रहे।

दूसरे ने कहा, “अच्छा काका न खेलो ; परदेस गये थे वहाँ के कुछ हाल सुनाओ।” विल्लेसुर ने कहा, “बिना अपने मरे कोई सरग नहीं देखता। बड़े होकर परदेस जाओगे तब मालूम कर लोगे कि कैसा है।” एक तीसरे ने कहा, “यहाँ हमलोग हैं, भेड़िये का डर नहीं ; वह ऊँचे द्वार में लगता है।” विल्लेसुर ने कहा, “इधर भी आता है, लेकिन आदमी का भेस बदल कर।”

यह कहकर विल्लेसुर उठे। बकरियाँ एक एक पत्ती टूँग चुकी थीं। झपाटे से बढ़कर लगा उठाया और हाँककर दूसरी तरफ़ ले चले। पड़ती ज़मीन से ऊँचे, बाग़ की तरफ़ चलते हुए कुछ रियाँ की लच्छियाँ झाँटीं। दीनानाथ गाँव जाते हुए मिले। लोभी निगाह से बकरियों को देखते हुए पूछा, “कितने की खरीदीं ?” विल्लेसुर ने निगाह ताड़ते हुए कहा, अधियाँ की मिली हैं।” विल्लेसुर के जगे भाग से दीना की चोटी खड़ी हो गई—पेसा तअज्जुव हुआ। पूछा—“तीनों ?” विल्लेसुर ने अपनी खास मुस्कराहट के साथ जवाब दिया, “नहीं तो क्या—एक ?” दीना ने अरथाकर पूछा, “यानी बकरी तुम्हारी, दूध तुम्हारा ; मर जाय, उसकी ; बच्चे, आधे आधे ?” विल्लेसुर ने कहा, “हाँ।” विल्लेसुर के असम्भावित लाभ के बाँझ से जैसे दीना की कमर टेढ़ी हो गई। दवा हुआ बोला, “हाँ, गुसैयाँ जिसको दे।” मन में ईर्ष्या हुई। विल्लेसुर अकेले मज़ा लेंगे ? दीना नहीं अगर बकरियों को पेट में न डाला। विल्लेसुर ने देखा, दीना के माथे पर बल पड़े हुए थे, आँखों में इरादा ज़ाहिर था। विल्लेसुर को ज़िन्दगी के रास्ते रोज़ पेसी ठोकर लगी है, कभी बच्चे हैं, कभी चूके हैं। अब बहुत सँभले रहते हैं। हमेशा निगाह सामने रहती है। वहाँ से बढ़ते हुए गूलड़

के पेड़ के तले गये। कुछ पत्ते काटे और उनका बोझ बनाकर बाँध लिया घर में बकरियों को खिलाने के इरादे। जब बकरियों का पेट भर गया तब बोझ सर पर रखकर दूसरे रास्ते से बकरियों को लिए हुए घर लौटे।

(८)

बिल्लेसुर के अपने मकान के इतने हिस्से हुए थे कि बकरियों को लेकर वहाँ रहना असम्भव था। भाइयों को राज्यदमा न होने के कारण बकरियों की गन्ध से पेटराज़ होता। दूसरे, पुराना होकर घर कई जगह गिर गया था। रात को भेड़िये के रूप से चोर आ सकते थे और बकरियों को उठा ले जा सकते थे। ऐसे अनेक कारणों से बिल्लेसुर ने गाँव में एक खाली पड़ा हुआ पुराना मकान रहने के लिये लिया। खरीदा नहीं; यह शर्त रही कि छायेंगे, छोपेंगे, गिरने से मकान को बचाये रहेंगे। नोटिस मिलने पर छुः महीने में मकान खाली कर देंगे। मालिक मकान परदेश में रहते थे, एक तरह वहीं बस गये थे। जिनके सिपुर्द मकान था, वे सोलह आने नज़र लेकर बिल्लेसुर पर दयालु हो गये थे।

यह मकान परदेशी का होने के कारण वज़ादार हो यह बात नहीं। परदेशी जब इस मकान में रहते थे, बिल्लेसुर की ही तरह देशी थे। देश की दीनता के कारण ही परदेश गये थे। मकान के सामने एक अन्धा कुआँ है और एक इमली का पेड़। बारिश के पानी से धुलकर दीवारें ऊबड़-खावड़ हो गई हैं, जैसे दीवारों से ही पनाले फूटे हों। भीतर के पनाले का मुँह भर जाने से बरसात का पानी दहलीज़ की डेहरी के नीचे गड़ढा बनाकर बहा है। गड़ढा बढ़ता-बढ़ता ऐसा हो गया है कि बड़े जानवर, कुत्ते जैसे आसानी से

उसके भीतर से निकल सकते हैं। दहलीज़ की फ़र्श कहीं भी बराबर नहीं; उसके ऊपर लेटने की बात क्या, चारपाई भी उस पर नहीं डाली जा सकती। दूसरी तरफ़ एक ख़मसार है और उसी से लगी एक कोठरी। इसी में बिस्लेसुर आकर रहे। दरवाज़े का गढ़ा तोप दिया। बाक़ी घर की धीरे धीरे मरम्मत करते रहे।

एक वक्त रोटी पकाते थे, दोनों वक्त खाते थे। इस तरह सालभर से ज़्यादा भेल ले गये। उनका लक्ष्य और काम बढ़ते गये। लेकिन अड़चन से पीछा नहीं छूटा। गाँव में जितने आदमी थे, अपना कोई नहीं, जैसे दुश्मनों के गढ़ में रहना हो। भाई भी अपने नहीं। बिस्लेसुर सोचते थे, क्यों एक दूसरे के लिए नहीं खड़ा होता। जवाब कभी कुछ नहीं मिला। मुमकिन, दुनिया का असली मतलब उन्होंने लगाया हो। फिर भी, जान रहते काम करना पड़ता है, दूसरे की मदद करनी पड़ती है, सहारा लेना पड़ता है, यह सच है। इधर कोई ध्यान नहीं देता, यह कमज़ोरी दूर नहीं हो रही; कोई सूरत भी नज़र नहीं आ रही। हमारे सुकरात के ज़बान न थी, पर इसकी फ़िलासफ़ी लचर न थी; सिर्फ़ कोई इसकी सुनता न था; इसे भी भूलभुलैया से बाहर निकलने का रास्ता नहीं दिखा, इसलिए यह भटकता रहा।

कुछ वक्त और बीता। बकरियों के साथ ही रहते थे। सारे घर में लैंडियाँ। दमदार पहले से थे, बकरियों के साथ रहकर और हो गये थे। अब तक खरीदी बकरियों के नाती-नातिन पैदा हो चुकी थीं। कुछ पट्टे बेच भी चुके थे। अच्छी आमदनी हो चली थी। गाँववालों की नज़र में और खटकने लगे थे। एक दफ़ा कुछ लोग बिस्लेसुर के खिलाफ़ ज़मींदार के यहाँ फ़रियाद लेकर गये थे कि

गाँव के कुल पेड़ बिल्लेसुर ने डूँडे कर दिये—उनकी बकरियाँ विकवा दी जानी चाहिए। ज़मींदार ने, अच्छा, कहकर उनका उत्साह बढ़ाकर टाल दिया क्योंकि बिल्लेसुर की बकरियों पर उनकी निगाह पहले पड़ चुकी थी और वे सरकारी पेड़ों की छुँटाई की एक रकम बिल्लेसुर से तै करके लेने लगे थे। गाँववाले दिल का गुवार बिल्लेसुर को बकरिहा कहकर निकालने लगे। जवाब में बिल्लेसुर बकरी के बच्चों के वही नाम रखने लगे जो गाँववालों के नाम थे।

(६)

नहाकर, रोटी पका-खाकर, शाम के लिए रखकर, बिल्लेसुर बकरियों को लेकर निकले। कन्धे में वही लग्गा पड़ा हुआ। जामुन पक रही थी। एक डाल में लग्गा लगाकर हिलाया। लग्गे के एक तरफ़ हँसिया, दूसरी तरफ़ लगुसी बँधी थी। फरेंदे गि बनकर अँगोछे में ले लिये और खाते हुए गलियारे से चले। आगे महावीर जी वाला मन्दिर मिला। चढ़ गये और चबूतरे के ऊपर से मुँह की गुठली नीचे फेंककर महावीर जी के पैर छुए और रोज़ की तरह कहा, मेरी बकरियों की रखवाली किये रहना। तुलसीदास जी या सीताजी की जैसी अन्तर्दृष्टि न थी; होती, तो देखते, मूर्ति मुस्कराई। जल्दी-जल्दी पैर छूकर और कहकर मन्दिर के चबूतरे से नीचे उतरे। बकरियों को लेकर गलियारे से होते हुए बाग की ओर चले। दुपहर हो रही थी। पानी का गहरा दौंगरा गिर चुका था। ज़मीन गीली हो गई थी। ताल-तलैयाँ, गड़ही-गढ़े बहुत-कुछ भर चुके थे। कपास, धान, अगमन ज्वार-बाजरे, अरहर, सनई, सन, लोबिया, ककड़ी-खीरे, मक्का, उर्द आदि बोने के लोभी किसान तेज़ी से हल चला रहें थे। किसानों के तन्त्र के

जानकार बिल्लेसुर पहली वर्षा की मटैली सुगन्ध से मस्त होते हुए मौलिक किसानी करने की सोचते अपनी इसी धुन में बकरियों को लिये चले जा रहे थे। उन बँटाई उठाये खेतों में एक खेत खुद-काश्त के लिए ले लिया था। बरसातवाली किसानी में मिहनत ज्यादा नहीं पड़ती। एक बाह दो बाह करके बीज डाल दिया जाता है। वर्षा के पानी से खेती फूलती-फलती है। बैल नहीं हैं, अगमन जोतने-बोने के लिए कोई माँग न देगा। बिल्लेसुर ने निश्चय किया कि छः सात दिन में अपने काम भर को ज़मीन वे फावड़े से गोड़ डालेंगे। गाँव के लोग और सब खेती करते हैं, शकरकन्द नहीं लगाते। इसमें काफ़ी फ़ायदा होगा। फिर अग्रहन में उसी खेत में मटर बो देंगे। जब शकरकन्द बैठेगी, रात को ताकना होगा, तब किसान को कुछ देकर रात को तका लेंगे। एक अच्छी रक़म हाथ लग जायगी।

निश्चय के बाद जब बिल्लेसुर इस दुनिया में आये तब देखा, वे बहुत दूर बढ़ आये हैं। आग्रह और उतावली से जाँच की निगाह बकरियाँ पर डाली—गंगा, जमुना, सरजू, पारवती हैं, सेखाइन, जर्मीला, गुलबिया, सितबिया हैं; रमुआ, स्यमुआ, भगवतिया, परभुआ हैं, डुरुई है, और दिनवा? बिल्लेसुर चौकन्ने होकर देखने लग, पीछे दूर तक निगाह दौड़ाई दीनानाथ न दिखे। कलेजा धक्-स हुआ। दीनानाथ सबसे तगड़ थे, वहा पिछड़ गये, या कहाँ गये। बुलाने लगे। “उर्र्र्र, उर्र्र्र दिनवा! अ ले—अ ले—उर्र्र्र्र! आव-आव, दिनवा! उर्र्र्र, उर्र्र्र; बेटा दीनानाथ, उर्र्र्र!” “डुरुई मिमियाने लगी। दीनानाथ की कोई आहट न मिला। “डुरुई, कहाँ है दिनवा?” डुरुई मिमियाती हुई बिल्लेसुर के पास आ गई।

बिल्लेसुर बकरियों को लेकर उसी रास्ते लौटे। उसी नाले के पास लड़के ढोर लिये खड़े थे। बिल्लेसुर को देखकर मुस्कराये। बिल्लेसुर का हृदय रो रहा था। मुस्कराहट से दिमाग में गरमी चढ़ गई। लेकिन ज़ब्त किया। भलमन्साहत से पूछा, “बच्चा, हमारा बकरा इधर रह गया है?” “कौन बकरा?” “पट्टा एक, हम दिनवा कहते थे।” “दिनवा कहते थे तो दिनवा से पूछो। हम नहीं जानते, कहाँ है?”

बिल्लेसुर ने फिर पूछनाछ नहीं की। सन्देह हुआ। जी में आया, चलकर नाले के किनारे खाँजूँ, लेकिन बकरियों को किसके भरोसे छोड़ जायँ, फिर एक बच्चा गायब कर दिया जाय तो क्या करेंगे? जल्दी-जल्दी मकान की तरफ बढ़े। बच्चों और बकरियों को भगाते ले चले। रास्ते में दो-एक आदमी मिले, पूछा, “क्या है बिल्लेसुर, इतनी जल्दी और भगाये लिये जा रहे हो?” बिल्लेसुर ने कहा, “भय्या, एक पट्टा किसी ने पकड़ लिया है, वहाँ नाले के पास, लड़के ढोर लिये खड़े हैं, बताते नहीं।” सुननेवालों ने कहा, “जानते हो, गाँव में ऐसे चोर हैं कि कटौली भी आँगन में रह जाय तो अटारी से उतरकर उठा ले जायँ। बोलो तो द्वार-बाहर वेइज़्जत करें। कहाँ कोई गाँव छोड़कर भग जाय?” बिल्लेसुर बढ़े। दरवाज़ा खोला। कोठरी में बच्चों को और दहलीज में बकरियों को ताले के अन्दर बन्द करके डंडा लेकर दीना का पता लगाने चले।

पहले दीना के घर गये। पता लगा कि वह घर में नहीं है। वहाँ से सीधी ख़ुशकी से नाले की ओर बढ़े। ऊँचे टीले पर एक लड़का बैठा इधर-उधर देख रहा था। बिल्लेसुर समझ गये। नाले के किनारे-किनारे बढ़े। लड़के ने एक खास तरह की आवाज़

की। बिल्लेसुर समझ गये कि पास ही कहीं है। बढ़ते गये, बढ़ते गये। दूर एक भाड़ी दिखी, निश्चय हुआ कि यहीं कहीं मारा पड़ा होगा। भाड़ी के पास पहुँचे, वहाँ कोई नहीं था। भाड़ी के भीतर गये। अच्छी तरह देखने लगे, खून से तर ज़मीन दिखी। तश्तज्जुब से देखते रहे। बकरा या आदमी न दिखा। चेहरा उतर गया। दिल रो रहा था, लेकिन आँखों में आँसू न थे। कहीं इन्साफ़ नहीं, सिर्फ़ लोग नसीहत देने हैं। चलकर कुए के पास आये। बहुत गरमा गये थे। जगत पर बैठे। बकरा मार डाला गया। लड़के जानते हैं, लेकिन बतलाते नहीं। आठ रुपये का था। जी रो उठा। कोई मददगार नहीं। ढलते सूरज की धूप सिर पर पड़ रही थी, लेकिन बिल्लेसुर खयाल में ऐसे डूबे थे कि गरमी पहुँचकर भी न पहुँचती थी।

आज बकरियाँ भूखी हैं। शाम हो आई है, चराने का वक्त नहीं। लगा नहीं; पत्तियाँ नहीं काटीं; रात को भी भूखी रहेंगी। इस तरह कैसे निवाह होगा? बिना खाये सवेरें दूध न होगा। बच्चे भूखे रहेंगे। दुबले पड़ जायेंगे। बीमारी भी जकड़ सकती है। चोकर रक्खा है, लेकिन उतनी बकरियों और बच्चों को क्या होगा? रात को पेड़ छाँटना पड़ेगा।

सूरज डूब गया। बिल्लेसुर की आँखों में शाम की उदासी छा गई। दिशाएँ हवा के साथ सायं-सायं करने लगीं। नाला बहा जा रहा था जैसे मोत का पैगाम हो। लोग खेत जोतकर धीरे-धीरे लौट रहे थे, जैसे घर की दाढ़ के नीचे दबकर, पिसकर मरने के लिए। चिड़ियाँ चहक रही थीं, रात को घोंसले की डाल पर बैठी हुई, रो-रोकर साफ़ कह रही थीं, रात को घोंसले में जंगली बिल्ले

सं हमें कौन बचायेगा ? हवा चलती हुई इशारे सं कह रही थी, सब कुछ इसी तरह बह जाता है।

बिल्लेसुर डंडा लिये धीरे-धीरे गाँव की ओर चले। ढाढस अपने आप बँध रहा था। दूसरे काम के लिए दिल में ताकत पैदा हो रही थी। भरोसा बढ़ रहा था। गाँव के किनारे आये। महावीर जी का वह मन्दिर दिखा। अँधेरा हो गया था। सामने सं मन्दिर के चबूतरे पर चढ़े। चबूतरे-चबूतरे मन्दिर की उल्टी प्रदक्षिणा करके, पीछे महावीर जी के पास गये। ला-परवाही से सामने खड़े हो गये और आवेग में भरकर कहने लगे—“देख, मैं गरीब हूँ। तुझे सब लोग गरीबों का सहायक कहते हैं, मैं इसीलिए तेरे पास आता था, और कहता था, मेरी बकरियों को और बच्चों को देखे रहना। क्या तूने रखवाली की, बता, लिये थूथन-सा मुँह खड़ा है ?” कोई उत्तर नहीं मिला। बिल्लेसुर ने आँखों से आँखें मिलाये हुए महावीर जी के मुँह पर वह डंडा दिया कि मिट्टी का मुँह गिली की तरह टूटकर बीघे भर के फ्लासले पर जा गिरा।

(१०)

बिल्लेसुर, जैसा लिख चुके हैं, दुख का मुँह देखते-देखते उसकी डरावनी सूरत को बार-बार चुनीती दे चुके थे। कभी द्वार नहीं खाई। आजकल शहरों में महात्मा गान्धी के बकरी का दूध पीने के कारण, दूध बकरी की बड़ी खपत है, इसलिए गाय के दूध से उसका भाव भी तेज़ है; मुमकिन, देहात में भी यह प्रचलन बढ़ा हो; पर बिल्लेसुर के समय सारा संसार बकरी के दूध से घृणा करता था; जो बहुत बीमार पड़ते थे, जिनके लिये गाय का दूध भी मना था, उन्हें बकरी के दूध की व्यवस्था दी जाती थी। बिल्लेसुर के

गाँव में ऐसा एक भी मरीज़ नहीं आया। जब दूध बेचा नहीं बिका, किसी को कृपापात्र बनवाये रहने के लिए व्यवहार में देने पर मुँह बनाने लगा, तब बिल्लेसुर ने खोया बनाना शुरू किया। बकरी के दूध का खोया बनाने में पहले प्रकृति बाधक हुई; बकरी के दूध में पानी का हिस्सा बहुत रहता है; बड़ी लकड़ी लगानी पड़ी; बड़ी देर तक चूल्हे के किनारे बैठ रहना पड़ा; बड़ी मिहनत; पहाड़ खांदने के बाद जब चुहिया निकली—खोये का छोटा-सा गोला बना, तब मन भी छोटा पड़ गया। भैंस के दूध के संभार में पाव भर का आधा भी नहीं होता था। धीरज बांधकर बेचने गये, भजना हलवाई जोत-पुरवाले के यहाँ, वह गट्टे काट रहा था, जल्दी में उसने देखा नहीं, तोलकर दाम दे दिये; दूसरे दिन गये तो तोलकर रख लिया। बिल्लेसुर ने पूछा, “दाम ?” उसने कहा, “दाम कल दे चुका हूँ, मैं समझा था भैंस का खोया है, यह बकरी का खोया है, बकरी के खोये के आधे दाम भी बहुत हैं, मैं बकरी का खोया नहीं लेता, अब न ले आना, सारी मिठाई बरबाद हो जाती है, गाहक गाली देते हैं; न घी है, न स्वाद; जो कुछ थोड़ा-सा घी निकलता है, वह दूसरे घी में मिलाया नहीं जा सकता—कुल घी बद्रू छोड़ने लगता है।” बिल्लेसुर सर झुकाकर चुपचाप चले आये। माल है, पर बिकता नहीं। तब तरकीब निकाली। इसमें खोया बनाने से कम मिहनत पड़ती है। कन्डे की आग परघाकर हन्डी में दूध रख देने लगे, अपना काम भी करते थे, दूध गर्म हो जाने पर ठंडा करके जमा देते थे, दूसरे दिन मथकर मक्खन निकाल लेते थे। मट्टा खुद भी पीते थे, बच्चों को भी पिलाते थे। मक्खन का घी बनाकर उसमें चौथाई हिस्सा भैंस का घी खरीदकर मिला देते थे, और छटाक आधपाव

सस्ते भाव में बाज़ार जाकर बेच आते थे। देहात में गाय, भैंस और बकरी का मिला घी भी विकता है। जिनके यहाँ जानवरों की दोनों या तीनों किस्में हैं, वे दूध अलग-अलग नहीं जमाते। विल्लेसुर का काम चल निकला। बकरे का मारे जाने को उन्होंने हानि-लाभ जीवन-मरण की फिलासफ़ी में शुमार कर अपने भविष्य की ओर देखा। उन्होंने निश्चय किया, बकरियों को हार में चराने न ले जायँगे, घर में ही खिलाएँगे; जब तक खेत तैयार न हो जाय और शकरकन्द की बाँड़ी न लग जाय। सवेरा होते ही विल्लेसुर फावड़ा लेकर खेत में जुटे। रात को इतनी पत्ती काट लाये थे कि आज दिन भर के लिये बकरियों का काफ़ी चारा था। बकरियाँ और बच्चे उसी तरह कोठरी और दहलीज़ में वन्द थे। फावड़े से खेत गोड़ते देखकर गाँव के लोग मज़ाक करने लगे, लेकिन विल्लेसुर बोले नहीं, काम में जुटे रहे। दुपहर होते-होते काफ़ी जगह गोड़ डाली। देखकर छाती ठंडी हो गई। दिल को भरोसा हुआ कि छः-सात दिन में अपनी मिहनत से बकरे का घाटा पूरा कर लेंगे। दुपहर होने पर घर आये, नहाकर लप्सी बनाई और खाकर कुछ देर आराम किया। दुपहर अच्छी तरह ढल गई, तीसरा पहर पूरा नहीं हुआ था, उठकर फिर खेत गोड़ने चले। शाम तक खेत गोड़कर बकरियों के लिये पत्ते काटकर पहर भर रात होते घर आये। सात दिन की जगह पाँच ही दिन में विल्लेसुर ने खेत का बह हिस्सा गोड़ डाला। खेत से एक पाटी निकाल ली। लोग वृद्धत थे, क्या बोने का इरादा है विल्लेसुर? विल्लेसुर कहते थे, भंग। देहात में कोई किसी को मन नहीं देता, यों कहीं भी नहीं देता। विल्लेसुर पता लगाकर शकरकन्द की बाँड़ी ले आये। एक दिन लोगों ने देखा, विल्लेसुर शकरकन्द

लगा रहें हैं। पानी बरसने और शकरकन्द की बौंड़ी के फैलने के साथ बिल्लेसुर आलू-की-जैसी मेड़ों पर मिट्टी चढ़ाने लगे।

(११)

जब से त्रिलोचन के बैल न लेकर बिल्लेसुर ने बकरियाँ खरीदी तभी से इस बेचारे को जटने के लिये त्रिलोचन पेच भर रहे थे। बकरियों के बच्चों के बढ़ने के साथ गाँव में धार्मिकता के लिये बिल्लेसुर का नाम भी बढ़ा। लोग तरह-तरह की राय जाहिर करने लगे। क्वार का महीना ; बिल्लेसुर की शकरकन्द की बेलें लहलही दिख रही थीं; लोग अन्दाज़ा लड़ा रहे थे कि इतने मन शकरकन्द निकलेगी ; बिल्लेसुर छुपर के नीचे बकरी के दूध में सानकर सत्तु गुड़ खा रहे थे, त्रिलोचन आये। बकरी के बच्चों पर एक भौआ आँधाया था, उस पर चढ़कर बैठने के लिये घूमे, लेकिन बिल्लेसुर को हाथ हिलाते देखकर वहीं ज़मीन पर बैठ गये। “एक बड़ी बढ़िया खबर है, बिल्लेसुर।” बिल्लेसुर से मुस्कराते हुए कहा। उपदेशक की मुद्रा से हथेली उठाकर बिना कुछ बोले, आश्वासन देते हुए, बिल्लेसुर ने समझाया, कुछ देर धीरज रक्खो। त्रिलोचन ने पूछा “भोजन करते बोलते नहीं क्या?” गम्भीर भाव से आँखें मँदकर सिर हिलाते हुए बिल्लेसुर ने जवाब दिया। त्रिलोचन अपनी बातचीत का तिलसिला मन-ही-मन जोड़ते रहे।

जल्दी-जल्दी सत्तु खाकर बिल्लेसुर उठे। पनाले के पास बैठकर हाथ धोये, कुल्ले किये, अभ्यास के अनुसार जनेऊ में बँधी ताँबे की दंतखोदनी उठाकर दाँत खरिका किये, फिर कुल्ले किये, और एक डकार छोड़कर सर झुकाये हुए कोठरी के भीतर गये। त्रिलोचन देखते रहे। बिल्लेसुर एक खटोला निकालकर बाहर ले आये।

डालकर कहा,—“आओ, ज़रा सँभलकर बैठना, हचकना नहीं।” त्रिलोचन उठकर खटोले पर बैठे। एक तरफ़ विल्लेसुर बैठे।

त्रिलोचन ने विल्लेसुर को देखा, फिर आश्चर्य से आँखें निकालकर कहा, “करना चाहो तो एक बड़ा अच्छा ब्याह है।”

बिवाह के नाममात्र से विल्लेसुर की नसों में विजली दौड़ गई : लेकिन हिन्दूधर्म के अनुसार उसे उपयोगितावाद में लाते हुए कहा, “अब देखते ही हो, सच्चा खाना पड़ा है। औरत कोई होती तो मरती हुई भी रोटी सँककर रखती।”

“यथार्थ है,” त्रिलोचन गम्भीर होकर बोले।

विल्लेसुर को बढ़ावा मिला, कहा, “गाँव के चार भाइयों का मोह है, पड़ा हूँ, नहीं तो मरने के लिये दुनिया भर में मुझे टौर है।”

“अब यह भी तुम समझाओगे तब समझेंगे ?”

विल्लेसुर का पौरुष जग गया। उन्होंने कहा, “बंगाल गया था, चाहता तो एक बैठा लेता ; लेकिन वापदादे का नाम भी तो है ? सोचा, कौन नाक कटाये ? तुम्हीं लोग कहते, विल्लेसुर ने वाप के नाम की लुटिया डुबो दी।” विल्लेसुर अपनी भूमिका से एकाएक विषय पर नहीं आ सकते थे। आने के लिये बढ़कर फिर हट जाते थे। त्रिलोचन ने कहा, “साग गाँव तुम्हारी तारीफ़ करता है ; गाँव ही नहीं, ग्वेड़ भी कि विल्लेसुर मर्द आदमी हैं।”

विल्लेसुर ने कहा, “नाम के लिये दुनिया मरती है। इतनी मिहनत हम क्यों करते हैं ? नाम ही नहीं तो कुछ नहीं। हमारे वाप मरकर भी नहीं मरे, क्यों ? और अगर उनके पोता न रहा तो ?”

त्रिलोचन ने कहा, “तुम्हारे जैसा समझदार लड़का जिनके है— “उनके पोता कैसे न रहेगा ?” कहकर त्रिलोचन गम्भीर हो गये।

विल्लेसुर ने कहा, “मा-वाप ही दुनिया के देवता हैं। धर्म तो रहा ही न होता अगर माँ-वाप न रहे होते।”

त्रिलोचन ने कहा, “वेशक ! धर्म की रक्षा हर एक को करनी चाहिये। तभी तो धर्म के पीछे जान दे देने के लिये कहा है।”

“अब देखो, खेत में काम काने गये, घर आये, औरत नहीं; बिना औरत के भोजन विधि-समेत नहीं पकता, न जल्दी में नहाते बनता है, न रोटी बनाते, न खाते; धर्म कहाँ रहा ?” विल्लेसुर उत्तेजित होकर बोले।

“हम तो बहुत पहले समझ चुके थे, अब तुम्हीं समझो।” कहकर त्रिलोचन ने तीमरी श्राँख पर मन को चढ़ाया।

विल्लेसुर ने एक दफ़ा त्रिलोचन को देखा, फिर सोचने लगे, “देखो, दलाल बनकर आया है। सोचता है, दुनिया में हम ही चालाक हैं। अभी रुपए का सवाल पेश करेगा। पता नहीं, किसकी लड़की है, कौन है? ज़रूर कुछ दाग होगा। अड़चन यह है कि निवाह नहीं होता। भूख लगती है, इसलिए खाना पड़ता है। पानी बरसता है, धूप होती है, लू चलती है इसलिये मकान में रहना पड़ता है। मकान की रखवाली के लिए ब्याह करना पड़ता है। मकान का काम स्त्री ही आकर संभालती है। लोग तरह-तरह को चीज़-वस्तुओं से घर भर देते हैं; स्त्री को ज़ेवर-गहने बनवाते हैं। यों सब भोल है—ढोल में सब पोल ही पोल तो है ?” विल्लेसुर को गुरुआइन की याद आई, गाँव के घर-घर का सुना इतिहास श्राँख के सामने घूम गया। अब तक वे झूठ कहते रहे। यही कारण है कि बुलबुल काँपे में फँसता है। त्रिलोचन के ज्ञान में रहने की प्रतिक्रिया विल्लेसुर में हुई। फिर यह सोचकर

कि अपना क्या विगड़ता है,—इसका मतलब मालूम करलेना चाहिये, करुण स्वर से बोले, “हाँ भय्या, समझदार तुमको गाँव के सभी मानते हैं।”

खुश होकर त्रिलोचन ने कहा, “ऐसी औरत गाँव में आई नहीं—सोलह साल की, आगभभूका।”

विल्लेसुर को देवियों की याद आ गई थी, इसलिये बिचलित होकर संभल गये। कहा, “तुम्हारी आँख कभी धोखा खा सकती है? कहाँ की है?”

“यह तो न बतायेंगे, जब व्याह्रन चलोगे, तभी मालूम करोगे।”

“पहले तो फलदान चढ़ेंगे, या इसकी भी ज़रूरत नहीं?”

“फलदान चढ़ेंगे, लेकिन कोई पूछ-ताछ न होगी, तिथारियों के यहाँ की लड़की है। सब काम हमारी मारफ़त होगा।”

“किस गाँव की है?”

“इतना बता दिया तो क्या रह जायगा? यह व्याह्र से पहले मालूम हो ही जायगा। मगर एक बात है। उनके यहाँ व्याह्र का खर्च नहीं। भलेमानस हैं। खड़की नहीं बेचेंगे, पर खर्च तुम्हें देना होगा।”

“कितना?”

त्रिलोचन हिसाब लगाने लगे, खुलकर कहते हुए, “तुम्हारे यहाँ फलदान चढ़ाने आयेंगे तो ठहरेंगे हमारे यहाँ। थाल में सात रुपये रखेंगे और नारियल के साथ एक थान। इसमें बीस रुपये का खर्च है। यह तुम्हें फलदान के दिन से सात गोज़ पहले दे देना होगा। फिर फलदान चढ़ जाने पर डेढ़-सौ रुपये विवाह के खर्च के लिए उसी दिन देना पड़ेगा, सब हमारी मारफ़त। भले आदमी

हैं, नहीं निवाह सकते। तुमसे हाथ फैलाकर लें, तो कैसे? द्वार के चार से, ब्याह, भात और बड़ाहार, बरतौनी तक डेढ़ सौ, दाल में नमक के बराबर भी नहीं। लेकिन तुम्हें भी तो नहीं उजाड़ सकते? कुल में तुम सें बड़े।”

विल्लेसुर ने कहा, “कुल में बड़े हैं तो ब्याह फलेगा नहीं। मन्नू बाजपेयी ने, रुपये न होने से, उतरकर ब्याह किया, लड़की बेवा हो गई। भय्या, मुझे तो यही बड़ा डर है कि कहीं.....”

त्रिलोचन का चेहरा उतर गया। बोले, “घबड़ाते हो नाहक। जितने बड़े हैं, सब बने हुए हैं। अस्ल में बड़े हैं ही नहीं। मन्नी बाजपेयी की लड़की ने अपने पति को मार डाला। कहते हैं, उसकी उम्र ज्यादा हो गई थी, मायके में ही वह बिगड़ गई थी, इसीलिये मन्नू ने उसका ब्याह उतरकर कर दिया था। अपने यार के कहने से उसने पति को ज़हर खिला दिया। वह कुछ दिन से बीमार था, दवा हो रही थी।”

“कहीं यह भी ऐसा ही मुझ पर करे।” विल्लेसुर शंका की दृष्टि से देखने लगे।

“कहता तो हूँ, किसी तरह का खौफ़ न खाओ। विचवानी में हूँ। लड़की में न दाग, न कलङ्क, न चाल-चलन बिगड़ा, न काली-कानी-लँगड़ी-लूली।”

“जब तुम कह रहे हो तो एतवार सोलहो आने हैं; लेकिन पता बिना जाने दस रोज़ पहले आये नातेदारों से क्या कहूँगा? उनसे यह भी नहीं कहते बनता कि त्रिलोचन भय्या जानते हैं; इसीलिये पता पूछता हूँ। दूसरी बात; कुण्डली विचरवा लेनी है। लड़की की कुण्डली ले आओ। मैं अपने सामने विचरवाऊँगा। लड़की

मंगली निकली तो बेमौत मरना होगा ? ब्याह करना है तो आँसू खोलकर करना चाहिये ।”

त्रिलोचन मन से बहुत नाराज़ हुए । बोले, “ऐसी बातें करते हो जैसे बाला के हो । तुम्हारे यहाँ वे नहीं आए और कभी कोई भलामानस न आयेगा । हम कहते थे कि भद्रा के जैसे मारे इधर-उधर घूमते हो, तुम्हारा घर बस जाय, लेकिन तुम आ गये अपनी अस्त्रियत पर । मान लो, तूम्हीं मङ्गली निकले, तो ? कौन वाप अपनी लड़की तुम्हें सौंप देगा ? रही बात नानेदागी वाली, सो हम तो इस सोलहो आने वेवकूफ़ी समझते हैं । बैठे-बैठाये पच्चीस रुपये का खर्च सिर पर । हम तो कहते हैं, चुपचाप चले चलो, विवाह कर लाओ । लड़की के वाप का नाम मालूम करना चाहते हो तो चले चलो, उनका घर भी देख आओ । लेकिन तुम्हारा जाना शोभित नहीं है, गाँव भर तुम दोनों को हँसेंगे ।”

विल्लेसुर को कुछ विश्वास हुआ । लेकिन रुपये की सोचकर कटे । लड़की के रूप का मोह भी घेरे था, सैकड़ों कलियाँ चटक रही थीं, खुशबू उड़ रही थी, पर त्रिलोचन पर पूरा-पूरा विश्वास न हो रहा था । पूछा, “यहाँ से कितनी दूर है ?”

“तीन-चार कोस होगा ।”

विल्लेसुर ने सोचा, एक दिन में चले चलेंगे और लौट भी आयेंगे । बकरियों को बड़ी तकलीफ़ न होगी । पत्त काटकर डाल जायेंगे । बोले, “तो चले चलो भय्या, देख लेना चाहिये, जिस दिन कहो तैयारी कर दी जाय ।”

त्रिलोचन ने मतलब गाँठकर कहा, “अच्छा आज के चौथे दिन चलेंगे ।”

(१२)

विल्लेसुर को उस रात नींद न आई। वही रूप देखते रहे। बहुत गोरी है सोचते रामरतन की स्त्री की याद आई। सोलह साल की है सोचा तो रामचरन सुकुल की बिटिया की सूरत सामने आ गई। बड़ी-बड़ी आँखें होंगी, जैसी पुखराजवाई की लड़की हसीना की हैं। इस घर में आयेगी तो घर में उजाला छाया रहेगा। जिस कोठरी में बच्चे रक्खे जाते हैं, उसमें उसका सामान रहेगा। बच्चे दहलीज में रहेंगे। एक छप्पर डाल लेंगे, सब ऋतुओं के लिए आराम रहेगा।

एक दफ़ा भी विल्लेसुर ने नहीं सोचा कि बकरी की लेंडियों की बढबू से पेसी औरत एक दिन भी उस मकान में रह सकेगी।

सबरे उठकर पड़ोस के एक गाँव में बज़ाज़ के यहाँ गये और कुर्ते का कपड़ा लिया, साफ़ा खरीदा गुलाबी रंग का, धोती एक ली। दरजी को कुर्ते की नाप दी। उसी दिन बना देने के लिए कहा। गाँव के चमार से जूते का जोड़ा खरीदा।

इधर यह सब कर रहे थे, उधर ताड़े रहे कि त्रिलोचन कहाँ हैं। तीसरे दिन त्रिलोचन घर से निकले। पहनावा और हाथ का डंडा देखकर विल्लेसुर समझ गये कि जा रहा है, वातचीत करके कल इन्हें ले जायगा। चलने की दिशा देख कर अपने साधारण पहनावे से दूर-दूर रहकर, पीछा किया। त्रिलोचन वावू के पुरवा के सीधे कच्ची सड़क छोड़कर मुड़े। विल्लेसुर दूर पुरवा के किनारे खड़े होकर देखने लगे कि त्रिलोचन दूसरे गाँव के लिये पुरवा से बाहर निकलते न दिखे, तब विल्लेसुर को विश्वास हो गया कि यहीं है। वे भी गाँव के भीतर गये। निकास पर एक आदमी मिला। विल्ले-

सुर ने पूछा, “यहाँ श्यामपुर के त्रिलोचन आये हैं?” आदमी ने कहा, “हाँ, वहाँ रामनारायण के यहाँ बैठा है, ठग कहीं का। दोनों एक से, किसी का गला नाप रहे होंगे।”

विल्लेसुर का कलेजा धक से हुआ। पूछा, “रामनारायण के लड़की-लड़के कुछ हैं?”

आदमी चौंकर विल्लेसुर को देखने लगा, “तुम कहाँ रहते हो? तुम रामनारायण को नहीं जानते? उसके साले के लड़की-लड़के! पूछो, ब्याह भी हुआ है?”

आदमी इतना कहकर आगे बढ़ा। विल्लेसुर को बड़ी कायली हुई। वे उसी तरफ मन्त्री की ससुराल को चले। मन्त्री की सास से मिले। भला-बुरी सुख-दुख की बातें हुईं। विल्लेसुर ने ढाढस बँधाया। कहा, खर्चा न हो तो आकर ले जाया करो। कहकर एक रुपया हाथ पर रख दिया। मन्त्रा अच्छी तरह हैं, कहा। उनकी लड़की की अच्छी सेवा होती है, मन्त्री उसकी बड़ी देख-रेख रखते हैं। अब वह बहुत बड़ी हो गई है।

मन्त्री की सास बहुत प्रसन्न हुईं। रुपया उठा लिया और पूछा, “घर बसा या नहीं। विल्लेसुर ने जबाब दिया कि घर माँ-बाप के बसाये बसता है। मन्त्री की सास ने कहा कि वे दस-पन्द्रह दिन में आयेंगी तब ब्याह की पक्की बातचीत करेंगी। विल्लेसुर पैर छूकर विदा हुए।

(१३)

त्रिलोचन दूसरे दिन आये, और कहा, “विल्लेसुर, तैयार हो जाओ।”

विल्लेसुर ने कहा, “मैं तो पहले से तैयार हो चुका हूँ।”

त्रिलोचन खुश होकर बोले, “तो अच्छी बात है, चलो।”

बिल्लेसुर ने कहा, “भय्या, मन्नी की मौसिया सास की भतीजी का ससुराल में एक लड़की है, कल आये थे, बातचीत पक्की कर गये हैं, अब तो मुझे माफ़ी दीजिये।”

त्रिलोचन नाराज होकर बोले, “तो वह ब्याह ज़रूर गैतल होगा। वैसी ही लड़की होगी। हम शर्त बदकर कह सकते हैं।” मुस्कराकर बिल्लेसुर ने जवाब दिया, “और तुम्हारा दूध का धोया है? मन्नी की मौसिया सास की भतीजी की ससुराल की लड़की में दाग है, और तुम्हारी में, जिसके न बाप का पता, न माँ का, न सम्बन्ध का, मखमल का झुन्वा लगा है?”

“देखो, फिर पीछे पछुताओगे।” त्रिलोचन बढ़कर बोले।

“पछुताने का काम ही नहीं करते; बहुत समझकर चलते हैं, त्रिलोचन भय्या।” बिल्लेसुर ने कड़ाई से जवाब दिया।

“अच्छा, चलकर ज़रा लड़की तो देख लो, तुम्हें लड़की भी दिखा देंगे।”

“अब, लड़की नहीं, लड़की की आजी तक को दिखाओ तो भी मैं नहीं जाऊँगा। जब घर में, अपने नातेदारों में लड़की है तब दूसरी जगह नहीं जाना चाहिये। यह तो धर्म छोड़ना है। गृहस्थ की लड़की का रूप नहीं देखा जाता, गुण देखा जाता है। कहते हैं, रूपवती लड़की बदचलन होती है।”

“तो यह तेरे लिये सावित्री आ रही है। देख ले, अगर गाँव के धिगरों से पीछा छूटे।”

“वह सब हमें मालूम है। लेकिन घर का सामान लेकर भाग न जायगी, देख लेना। जो मुसीबत पड़ेगी, भेलेगी। किसी का धर्म बिगाड़ने से नहीं बिगड़ता। गाँव में सब का हाल हमें मालूम है।”

“तू सबको दोष लगा रहा है ।”

“मैं किसी को दोष नहीं लगा रहा, सच-सच कह रहा हूँ ।”

“अच्छा बता, हमें क्या दोष लगा है, नहीं तो—”

“तुम चले जाओ यहाँ से, नहीं तो मैं चौकीदार के पास जाता हूँ ।”

चौकीदार के नाम से त्रिलोचन चले । करुणा-भरे क्रोध से घूम-घूमकर देखते जाते थे ।

बिल्लेसुर अपना काम करने निकले ।

(१४)

कातिक लगते मन्त्री की सास आई । कुछ भटकना पड़ा । पूछते-पूछते मकान मालूम कर लिया । बिल्लेसुर ने देखा, लपककर पैर छुप । मकान के भीतर ले गये । खटोला डाल दिया । उस पर एक टाट बिछाकर कहा, “अम्मा, बैठो ।” खटोले पर बैठते हुए मन्त्री की सास ने कहा, “और तुम खड़े रहोगे ?” बिल्लेसुर ने कहा, “लड़कों को खड़ा ही रहना चाहिये । आपकी बेटी हैं तो क्या ? जैसे बेटी, वैसे बेटा । मुझसे वे बड़ी हैं । आप तो फिर धर्म की माँ । पैदा करनेवाली तो पाप की माँ कहलाती है । तुम बैठो, मैं अभी छुनभर में आया ।”

बिल्लेसुर गाँव के बनिये के यहाँ गये । पावभर शकर ली । लौटकर बकरी के दूध में शकर मिलाकर लोटा भरकर खटोले के सिरहाने रक्खा । गिलास में पानी लेकर कहा, “लो अम्मा, कुल्ला कर डालो । हाथ-पैर धोने हों तो डोल में पानी रक्खा है, बैठे-बैठे गिलास से लेकर धो डालो ।” कहकर दूधवाला लोटा उठा लिया । मन्त्री की सास ने हाथ-पैर धोये । बिल्लेसुर लोटे से दूध डालने

लगे, मन्त्री की सास पीने लगीं। पीकर कहा, “बच्चा, मैं बकरी का दूध ही पीती हूँ। इससे बड़ा फ़ायदा है, कुल रोगों की जड़ मर जाती है।”

शाम हो रही थी। आसमान साफ़ था। इमली के पेड़ पर चिड़ियाँ चहक रही थीं। विल्लेसुर ने आसमान की ओर देखा, और कहा, “अभी समय है। अम्मा, तुम बैठो। मैं अभी आता हूँ। बकरियों को देखे रहना, नहीं। भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लो। आकर खोलवा लूँगा। यहाँ अम्मा, बकरियों के चोर बड़े लागन हैं।” विल्लेसुर बाहर निकले। मन्त्री की सास ने दरवाज़ा बन्द कर लिया।

सीधे खेत-खेत होकर रामगुलाम काँधी की बाड़ी में पहुँचे। तब तक रामगुलाम बाड़ी में थे। विल्लेसुर ने पूछा, “क्या है?” रामगुलाम ने कहा, “भाँटे हैं, करले हैं, क्या चाहिये?” विल्लेसुर ने कहा, “संभर भाँटा दे दो। मुलायम मुलायम देना।” रामगुलाम भाँटे उतारने लगा। विल्लेसुर खड़े बैंगन के पेड़ों की हरियाली देखते रहे। एक-एक पेड़ पेंटा खड़ा कह रहा था, “दुनिया में हम अपना सानी नहीं रखते।” रामगुलाम ने भाँटे उतारकर, तोलकर, मालवाला पलड़ा काफ़ी भुका दिखाते हुए, विल्लेसुर के अँगोछे में डाल दिये। विल्लेसुर ने पहले अँगोछे में गाँठ मारी, फिर टेंट से एक पैसा निकालकर हाथ बढ़ाये खड़े हुए रामगुलाम को दिया। रामगुलाम ने कहा, “एक और लाओ।” विल्लेसुर मुस्कराकर बोले, “क्या गाँववालों से भी बाज़ार का भाव लगे?” रामगुलाम ने कहा, “कौन रोज़ अँगोछा बढ़ाये रहते हो? आज मन चला होगा या कोई मातेदार आया होगा।” विल्लेसुर ने कहा, “अच्छी बात है, कल

ले लेना। इस वक्त नहीं है।” विल्लेसुर की तरकारी खाने की इच्छा होती थी तो चने भिगो देते थे, फिर तेल मसाले में तलकर रसेदार बना लेते थे। लौटते हुए मुरली कहार से कहा, “कल पहर भर दिन चढ़ते हमें दो सेर सिंघाड़े दे जाना।” फिर घर आकर दरवाज़ा खोलवाया। दीया जलाकर बकरियों को दुहा। सवेरे की काटी पत्तियाँ डालीं और रसोई में रोटी बनाने गये। रोटी, दाल, भात, बेंगन की भाजी, आम का अचार, बकरी का गर्म दूध और शकर परोसकर पटा डालकर पानी रखकर सास जी से कहा, “अम्मा, चलो, भोजन कर लो।” मन्नी की सास शरमाई हुई उठी; हाथ-पैर धोकर चौकें में जाकर प्रेम से भोजन करने लगीं। खाते-खाते पूछा, “भैंस तो तुम्हारे है नहीं, लेकिन घी भैंस का पड़ा जान पड़ता है।” विल्लेसुर ने कहा, “गृहस्थी में भैंस का घी रखना ही पड़ता है, कोई आया-गया, अपने काम में बकरी का घी ही लाता हूँ।” मन्नी की सास ने छककर भोजन किया, हाथ-मुँह धोकर खटोले पर बैठीं। विल्लेसुर ने इलायची, मसाले से निकालकर दी। फिर स्वयं भोजन करने गये। बहुत दिनों बाद तृप्ति से भोजन करके पड़ोस से एक चारपाई माँग लाये; डालकर खटोले का टाट उठाकर अपनी चारपाई पर डाला और मन्नी की सास के लिये बंगाल से लाई रंगीन दरी बिछा दी, वहीं का गुरुआइन की पुरानी धोतियों का लपेटकर सीया तकिया लगा दिया। सास जी लेटीं। आँखें मूदकर विल्लेसुर की बकरियों की बात सोचने लगीं। जब विल्लेसुर काछी के यहाँ गये थे, उन्होंने एक-एक बकरी को अच्छी तरह देखा था। गिनकर आश्चर्य प्रकट किया था। इतनी बकरियों और बच्चों से तीन भैंस पालने के इतना मुनाफ़ा हो सकता है, कुछ ज्यादा ही होगा।

विल्लेसुर धैर्य के प्रतीक थे। मन में उठने पर भी उन्होंने विवाह की बातचीत के लिये कोई इशारा भी नहीं किया। सोचा, “आज थकी हैं, आराम कर लें, कल अपने आप बातचीत छेड़ेंगी, नहीं तो यहाँ सिर्फ मुँह दिखाने थोड़े ही आई हैं ?”

विल्लेसुर पड़े थे। एकाएक सुना, खटोले से सिसकियाँ आ रही हैं। साँस रोककर पड़े सुनते रहे। सिसकियाँ धीरे-धीरे गुँजने लगीं, फिर रोने की साफ़ आवाज़ उठने लगी। विल्लेसुर के देवता कूच कर गये कि खा-पीकर यह कारन करके रोना कैसा ? जाँ धक से हुआ कि विवाह नहीं लगा, इसकी यह अग्रसूचना है। घबराकर पूछा, “क्यों अम्मा, रोती क्यों हो ?” मन्नी की सास ने रोते हुए कहा, “न जाने किस देश में मेरी विटिया को ले गये ! जब सं गये, एक चिट्ठी भी न दी।”

विल्लेसुर ने समझाया, “अम्मा, रोओ नहीं। भाभी बड़े मज़े में हैं। मन्नी भय्या उनकी बड़ी सेवा करते हैं। मैं जहाँ गया था, मन्नी वहाँ से दूर हैं। हाल मिलते थे। लोग कहते थे अच्छी नौकरी लग गई है। उनका सारा मन भाभी पर लगा है। अब भाभी उतनी ही बड़ी नहीं हैं। लोग कहते थे, विल्लेसुर अब दो-तीन साल में तुम्हारे भतीजा होगा।

“राम करे, सुख से रहें। हमको तो धोखा दे गये बच्चे ! हमारे और कौन था ? जिस तरह दिन कटते हैं, हमारी आत्मा जानती है।” कहकर मन्नी की सास ने अघाकर साँस छोड़ी।

विल्लेसुर ने कहा, “जैसे मन्नी, वैसे मैं। तुम यहाँ रहो। खाने की यहाँ कोई तकलीफ़ नहीं। मुझे भी बनी बनाई दो रोटियाँ मिल जायँगी।”

मन्त्री की सास बहुत प्रसन्न हुई। कहा, “बच्चा, फूलो-फलो, तुम्हारा तो आसरा ही है। अब के आई हैं तो कुछ दिन रहकर जाऊँगी। तुम्हारा काम-काज यहाँ का देख लूँ। ब्याह एक लगा है, हो गया तो उसे तुम्हारी गृहस्था समझा दूँ।”

“इससे अच्छी बात और क्या होगी?” विल्लेसुर पौरुष में जगकर बोले।

मन्त्री की सास ने कहा, “बच्चा, अब तक नहीं कहा था, सोचा था, जब काम से छुट्टी पा जाओगे, तब कहूँगी। ब्याह एक ठीक है। लड़की तुम्हारे लायक, सयानी है। लेकिन हमारी विटिया की तरह गोरी नहीं। भलेमानस है। घर का कामकाज सँभाल लेगी। बताओ, राज़ी हो?”

विल्लेसुर भक्तिभाव से बोले, “आप जानें। आप राज़ी हैं तो मैं भी हूँ।”

मन्त्री की सास प्रसन्न हुई, कहा, “ठीक है। कर लो। उसको भी तुम्हारे साथ तकलाफ़ न होगी। थोड़ी-सी मदद उसकी माँ की तुम्हें करती रहनी पड़ेगी। ब्याह से पहले, बहुत नहीं, तीस रुपये दे दो! गरीब है, कर्जदार है। फिर कुछ-कुछ देते रहना। उसके भी और कोई नहीं। मैं लड़की को तुम्हारे यहाँ ले आऊँगी। यहीं विवाह कर लो। बरात उसके यहाँ ले जाओगे तो कुल खर्चा देना पड़ेगा, इसमें ज्यादा खर्चा बैठेगा। घर में अपने चार नातेदार बुलाकर ब्याह कर लोगे, भले-भले पार लग जाओगे।”

विल्लेसुर को मालूम दिया, इस ज़्वान में छुल नहीं, कहा, “हाँ, बड़ी नेक सलाह है।”

मन्त्री की सास कई रोज़ रहीं। विल्लेसुर को बना-बनाया खाने

को मिला। तीन-चार दिन में रंग बदल गया। उन्होंने आग्रह किया कि व्याह तब वे वहीं रहें। मन्त्री की सास ने भी स्वीकार कर लिया।

गाँव में विल्लेसुर की चर्चा ने ज़ोर मारा। एक दिन त्रिलोचन ने मन्त्री की सास को घेरा और पूछा, 'बताओ, व्याह कहाँ रचा रही हो?'

"अपनी नातेदारी में" मन्त्री की सास ने कहा।

"वह कहाँ है?" त्रिलोचन ने पूछा।

"क्यों, क्या विल्लेसुर तुम्हीं हो?" मन्त्री की सास ने आँखें नचाकर पूछा; फिर कहा, "बच्चे, मेरी निगाह साफ़ है, मुझे तीगुर नहीं लगता। अब तुम बताओ कि तुम विल्लेसुर के कौन हो?"

बह्नी नहीं लगी। त्रिलोचन बहुत कटे। कहा, "अच्छी बात है, कौन है, यह होने पर बतायेंगे जब उनका पानी बन्द होगा।"

"नातेदार रिश्तेदार जिसके साथ हैं, उसका पानी परमात्मा नहीं बन्द कर सकते। अच्छा, हमारे घर से बाहर निकलो और गाँव में पानी बन्द करो चलकर।" त्रिलोचन खिसियाये हुए घर से बाहर निकल गये।

बड़े आनन्द से दिन कट रहे थे। विल्लेसुर की शकरकन्द खूब वैठी थी। कई रोज़ उन्होंने मन्त्री की सास को शकरकन्द भूनकर बकरी के दूध में खिलाया। मन्त्री की सास मन्त्री से जितना अप्रसन्न थी, विल्लेसुर से उतना ही प्रसन्न हुई। उन्होंने विल्लेसुर के उजड़े वाग का एक-एक पेड़, शकरकन्द के खेत की एक-एक लता देखी। उनके आ जाने से ताकने के लिये विल्लेसुर रात को शकरकन्द के खेत में रहने लगे। दो-एक दिन जंगली सुअर लगे; दो-तीन दिन कुछ-

कुछ चोर खोद ले गये। अभी बाँड़ी पीली नहीं पड़ी थी। नुक़सान होता देखकर मन्त्री की सास ने कुछ शकरकन्द खोद लाने की सलाह दी। विल्लेसुर ने वैसा ही किया। उन्होंने घर में ढेर लगाकर देखा, इतनी शकरकन्द हुई है कि साग घर भर गया है। एक-एक शकरकन्द जैसे लोढ़ा, मन्त्री की सास ने मुस्कराते हुए कहा, “इससे तुम्हारा व्याह भी हो जायगा और काफ़ी शकरकन्द भी खाने को बच रहेगी।” शकरकन्दों को विश्वास की दृष्टि से देखते हुए विल्लेसुर ने कहा, “अम्मा, सब तुम्हारा आसिगवाद, नहीं तो मैं किस लायक हूँ ?” सास ने साँस छोड़कर कहा, “मेरा बच्चा जीता होता तो अब तक तुम्हारे इतना दुःख होता। खेती-किसानी करता; मैं मारी-मारी न फिरती।” विल्लेसुर ने उन्हें धीरज दिया, कहा, “हमी तुम्हारे लड़के हैं। तुम कैसी भी चिन्ता न करो, मेरी जब तक साँस चलती है, मैं तुम्हारी सेवा करूँगा। जी न छोटा करो।” सास ने आँचल से आँसू पोंछे। विल्लेसुर दूसरे गाँव की तरफ़ शकरकन्दों का खरीदार लगाने चले। सोचा, बकियों के लिये लौटकर पत्ते काटूँगा। दूसरे दिन खरीदार आया और ७० की विल्लेसुर ने शकरकन्द बेची। सारे गाँव में तहलका मच गया। लोग सिहाने लगे। अगले साल सबने शकरकन्द लगाने की ठानी।

(१५)

कातिक की चाँदनी छिटक रही थी। गुलाबी जाड़ा पड़ रहा था। सबन-जाति की चिड़ियाँ कहीं से उड़कर जाड़े भर इमली की फुनगी पर बसेरा लेने लगी थीं; उनका कलरव उठ रहा था। विल्लेसुर रात को चबूतरे की बुर्जी पर बैठे देखते थे, पहले शाम को आसमान में हिरनी-हिरन जहाँ दिखते थे अब वहाँ नहीं हैं। विल्लेसुर

कहते थे, जब जहाँ चरने को चारा होता है, ये चले जाते हैं। शाम से ओस पड़ने लगी थी, इसलिये देर तक बाहर का बैठना बन्द होता जा रहा था। लोग जल्द-जल्द खा-पीकर लेट रहते थे। बिल्लेसुर घर आये। मन्त्री की सास ने रोज़ की तरह रोटी तैयार कर रक्खी थी। इधर बिल्लेसुर कुछ दिनों से मन्त्री की सास की पकाई रोटी खाते हुए चिकने हो चले थे। पैर धोकर चौके के भीतर गये। मन्त्री की सास ने परोस कर थाली बढ़ा दी। सास को दिखाने के लिये बिल्लेसुर रोज़ अग्रासन निकालते थे। भोजन करके उठते वक़्त हाथ में ले लेते थे और रखकर हाथ मुँह धोकर कुल्ले करके बकरी के वच्चे को खिला देते थे। अग्रासन निकालने से पहले लोटे में पानी लेकर तीन दफ़े थाली के बाहर से चुवाते हुए घुमाते थे। अग्रासन निकाल कर टुनकियाँ देते हुए लोटा बजाते थे और आँखें बन्द कर लेते थे। वह कृत्य आज भी किया।

जब भोजन करने लगे तब सास जी बड़ी दीनता से खीसँ काढ़कर बोलीं, “बच्चा, अब अगहन लगनेवाला है, कहो तो अब चलूँ।” फिर खाँसकर बोलीं, “वह काम भी तो अपना ही है।”

कौर निगलकर गम्भीर होते हुए, मोटे गले से बिल्लेसुर ने कहा, “हाँ वह काम तो देखना ही है।”

“बही कह रही थी,” कुछ आगे खिसककर सासजी ने कहा, “कुछ रुपये अभी दे दो, कुछ वाद को, ब्याह के दो-तीन रोज़ पहले दे देना।”

रुपये के नाम से बिल्लेसुर कुनमुनाये। लेकिन बिना रुपये दिये ब्याह न होगा, यह समझते हुए एक पख लगाकर ब्याह पक्का करने

लगे। कहा, “अभी तो अम्मा, किसी परिडत से विचरवाया भी नहीं गया, न बने, तो ?”

“बच्चे की बात” पूरे विश्वास से सर उठाकर मन्त्री की सास ने कहा, “उसमें जब कोई दोख नहीं है तब व्याह बनेगा कैसे नहीं ? बच्चे, वह पूरी गऊ हैं। और उसका व्याह ? वह अब तक होने को रहता ? रामखेलावन आये, परदेश से, उल्टे पाँव लौट जाना चाहते थे, हाथ जोड़ने लगे,—चाची, व्याह करा दो, जितना रुपया कहो, देंगे। अच्छा भाई, लड़की की अम्मा को मनाकर कुण्डली लेकर विचरवाने गये, फट से बन गया। लड़की की अम्मा को तीन सौ नगद दे रहे थे। पर सिस्टा की बात; लड़की की अम्मा ने कहा, मेरी विटिया को परदेश ले जायँगे, फिर कभी इधर भाँकेंगे नहीं; बिमारी-अरामी बूँद भर पानी को तरसूँगी; रुपये लेकर मैं क्या करूँगी? बना-बनाया व्याह उखड़ गया। फिर चुकन्दरपुर के जिमींदार रामनेवाज आये। उनसे भी व्याह बन गया। फलदान चढ़ने का दिन आया तब लड़की की अम्मा को उनके गाँव के किसी पट्टीदार ने भड़काया कि रामनेवाज अपने बाप का है ही नहीं, बस व्याह रुक गया। कितने व्याह आये सब बन गये, लेकिन कोई न हो पाया।”

बिल्लेसुर को निश्चय हो गया कि लड़की के खून में कोई खराबी नहीं। उन्होंने सन्तोष की साँस छोड़ी। मन्त्री की सास का भाव-वेश तब तक मन्द न पड़ा था, बङ्गालिन की तरह चटककर बोलीं, “अब तुमसे कहता हूँ, हमारे अपने हो, सैरुड़ों सच्ची-भूठी बातें न गढ़ती तो वह राँड तुम्हारे लिये राजी न होती।”

बिगड़कर बिल्लेसुर बोले, “तुम तो कहती थीं, बड़ी भले-मानुस है ?”

“कहने के लिये, बच्चा प, भलेमानुस सबको कहते हैं; लेकिन, कैसा भी भलामानुस हो, अपनी चित कौड़ी को पट होते देखता है? फिर वह दस विस्वेवाली तुम्हारे यहाँ कैसे लडकी व्याह देती? उसको समझाया कि दुरगादास के सुकुल हैं, परदेस कमा के आये हैं, कहो कि एक साथ गिन दें तो पेंसा न होगा; धीरे-धीरे देंगे। आखिर कहाँ जाती, मान गई। तुमसे इसीलिये कहा, ३०) व्याह से पहले दो, फिर धीरे-धीरे मदद करते रहो।” सासजी टकटकी बाँधे विल्लेसुर को देखती रहीं। इतने कम पर राज़ी न होना मूर्खता है, समझकर विल्लेसुर ने कहा, “अच्छा, कल कुगडली और एक रुपया लेकर चलो, तीन-चार दिन में मैं पण्डित से आकर पूछूँगा कि कैसा बनता है।”

“एक दफे नहीं, बच्चा, दस दफे। लेकिन जब आना तब पन्द्रह रुपये लेते आना कम-से-कम।”

गम्भीर होकर विल्लेसुर उठे और हाथ-मुँह धोने लगे। मन को समझाती हुई सासजी भोजन करने बैठीं। भोजन के बाद दोनों लेटे और अपनी-अपनी गुत्थी सुलभाते रहे। किसी ने किसी से बात-चीत न की। फिर सब सो गये। पौ फटने से पहले जब आकाश में तारे थे, मन्ना की सास जर्गी और विल्लेसुर को जगाने के इरादे से राम-राम जपने लगीं।

विल्लेसुर उठकर बैठे और आँखें मलकर, स्नेह सूचित करते हुए पूछा, “अम्मा, क्या सवेरे-सवेरे निकल जाने का इरादा है?”

मन्नी की सास ने आँखों में आँसू भरे। कहा, “बच्चा, अब देर करना ठीक नहीं। पिछले पहर चलूँगी तो रात होगी, काम न होगा।”

बिल्लेसुर ने अँधेरे में टटोलकर सन्दूक में रखी कुरडली निकाली और सासजी को देने हुए कहा, “देखियेगा, कहीं खो न जाय।”

“नहीं, वच्चा, खो क्या जायगी?” कहकर सासजी ने आग्रह से कुरडली ली। बिल्लेसुर ने टेंट से एक रुपया निकाला; सासजी के हाथ में रखकर पैर छुए; कहा, “यह तुम्हें कुछ दे नहीं रहा हूँ।”

“क्या मैं कुछ कहती हूँ, वच्चा?” असन्तोष को दबाकर मन्त्रीकी सास घर के बाहर निकलीं, रास्ते पर आकर एक साँस छोड़ी और अपने गाँव का गस्ता पकड़ा। अब तक सबेरा हो चुका था।

(२६)

बिल्लेसुर ने इधर बढ़ा काम किया। शकरकन्दवाले खेत में मटर बो दिये। उधरवाले में चने बो चुके थे, जो अब तक बढ़ आये थे।

काम करते हुए रह-रहकर बिल्लेसुर को सास की याद आती रही; विवाह की बेल जैसे कलियाँ लेने लगी; काम करते-करते दुचित्ते होने लगे; साँस रुक-रुक जाने लगी, रोएँ खड़े होने लगे।

आखिर चलने का दिन आया। बिल्लेसुर दूध दुहकर, एक हराडी में मुस्का बाँधकर, दूध लेकर चलने के लिये तैयार हुए। रात के काटे पत्ते रखे थे, बकरियों के आगे डाल दिये।

फिर पानी भरकर घर में स्नान किया। थोड़ी देर पूजा की। रोज़ पूजा करते रहे हों, यह बात नहीं। पूजा करते समय दरपन कई बार देखा, आँखें और भोंहें चढ़ाकर-उतारकर, गाल फुलाकर-पिचकाकर, होंठ फैलाकर-चढ़ाकर। चन्दन लगाकर एक दफ़ा फिर मुँह देखा। आँखें निकालकर देर तक देखते रहे कि चेचक के दाग कितने साफ़ दिखते हैं। फिर कुछ देर तक अशुद्ध गायत्री का जप

करते रहे, मन में यह निश्चय लिए हुए कि काम पूरा हो जायगा। फिर पुजापा समेटकर भीतर के एक तारु पर रखकर बासी रोटियाँ निकालीं। भोजन करके हाथ-मुँह धोया, कपड़े पहनने लगे। मोझे के नीचे तक उतारकर धोती पहनी, फिर कुर्ता पहनकर चारपाई पर बैठे, साफ़ा बाँधने लगे। बाँधकर एक दफ़े फिर उसी तरह दरपन देखा और तरह-तरह की मुद्राएँ बनाते रहे। फिर जब मैं वह छोटा-सा दरपन और गले में मैला अँगोछा और धुस्सा डालकर लाठी उठाई। जूते पहले से तेलवाये रखे थे, पहन लिये। दरवाज़े निकलकर मकान में ताला लगाया, और दोनों नथनों में कौन चल रहा है, दबाकर देखकर, उसी जगह दायँ पैर तीन दफ़े दे दे मारा, और दूधवाली हण्डी उठाकर निगाह नीची किये गम्भीरता से चले।

थोड़ी दूर पर भरा घड़ा मिला। विल्लेसुर खुश हो गये। घड़े-वाली सगुन की सोचकर मुस्कराई, कहा, "मेरी मिठाई कब ले आते हो?" काम निकलने के बादवाले आशय से सिर हिलाकर आश्वासन देते हुए विल्लेसुर आगे बढ़े।

नाला मिला। किनारे रियें और बबूल के पेड़। ख़ुशकी पकड़े चले जा रहे थे। बनियों के ताल के किनारे से गुजरे। देखकर कुछ वगले इस किनारे से उस किनारे उड़ गये। विल्लेसुर बढ़ते गये। शमशेरगंज का बैरहना मिला। एक जगह कुछ खजूर और ताड़ के पेड़ दिखे। सामने खेत, हरियाली लहराती हुई। ओस पर सूरज की किरनें पड़ रही थीं। आँखों पर तरह-तरह का रङ्ग चढ़-उतर रहा था। दिल में गुदगुदी पैदा हो रही थी। पैर तेज़ उठ रहे थे। मालूम भी न हुआ कि हाथ में दूध से भरी भारी हण्डी है।

ग्राम और महूप की कतारें कच्ची सड़क के किनारे पड़ीं। जाड़े

की सुहावनी सुनहली धूप छनकर आ रही थी। सारी दुनियाँ सोने की मालूम दी। गरीबीवाला रंग उड़ गया। छोटे-बड़े हर पेड़ पर पड़ा मौसिम का अरसर उनमें भी आ गया। अनुकूल हवा से तने पाल की तरह अपने लक्ष्य पर चलते गये। इस व्ययसाय में उन्हें फ़ायदा-ही-फ़ायदा है, निश्चय बँधा रहा। चारों ओर हरियाली। जितनी दूर निगाह जाती थी, हवा से लहराती तरङ्गें ही दिखती थीं; उनके साथ दिल मिल जाता और उन्हीं की तरह लहराने लगता था।

आशा की सफलता-जैसे, खेत और वगीचों के भीतर से गाँव की दिवारें दिखने लगीं। बिल्लेसुर उतावली से बढ़ते गये। गालियारे-गालियारे गाँव के भीतर पहुँचे। कुएँ की जगत के किनारे नहाने के लिये बनी पक्की चौकी पर बैठे एक वृद्ध सूर्य की ओर मुँह किये काँपते हुए माला जप रहे थे। कुछ आगे बढ़ने पर बड़ड़ियों का मकान मिला। गाड़ी के पहिये बनने की ठक-ठक दूर तक गूँज रही थी। कुछ और आगे दर्ज़ी की दूकान मिली। बटाँ बहुत-से लोग इकट्ठे दिखे। तरह-तरह के रङ्गीन कपड़े सिलने को आये फैले हुए। दर्ज़ी सिर गड़ाये तत्परता से मशीन चलाता हुआ। एक लड़का चौपाल की दूसरी तरफ़ बैठा भरी रज़ाई में टाँके लगाता हुआ। दो आदमी नये कपड़े काटते और मशीन पर चढ़ाने के लिये टाँकते हुए। लोग गौर से रङ्गों की बहार देखते लाठी के सहारे खड़े गप लड़ाते तम्बाकू धूकते हुए। बिल्लेसुर तद्गतेन मनसा सासजी के मकान की ओर बढ़े चले गये। एक कोलिया के भीतर सास जी का अधगिरा मकान था। दरवाज़े खुले थे। आवाज़ देते हुए भीतर चले गये। सासजी इन्तज़ार कर रही थीं। देखकर मुस्कराती हुई

उठी। नज़र हराडी पर थी। बिल्लेसुर ने गर्व से हराडी रख दी और सास जी के पैर छुए। सासजीने कुशल पूछी जैसे एक मुदत के बाद मुलाकात हुई हो; फिर बिन्ही चारपाई पर ले चलकर बैठाला और गौर से बिल्लेसुर की व्याहवाली उतावली की आंख देखती रहीं।

कुछ देर तक बिल्लेसुर बैठे गम्भीर होते रहे; फिर आवाज़ में भारीपन लाकर भले, गृहस्थ की तरह पूछा, “ब्याह बिचरवा तो लिया गया होगा?”

सासजी के समन्दर पर जैसे तूफ़ान आ गया। उद्वेल होकर तारीफ़ करने लगीं; किस तरह परिडत के यहाँ गईं,—परिडत ने बिचारा,—आँखें चढ़ाकर कहा,—‘साक्षात् लक्ष्मी हैं, घर पर पैर रखते ही घर भर देगी,—विवाह बहुत बनता है, लड़की वैश्य वर्ण है और देव गण,—बिल्लेसुर से कोई बैर नहीं पड़ता। साथ ही यह भी कहा कि कुल में ऊँचे हैं, इसलिये बिल्लेसुर यहाँ अपने को छुंगे के नहीं तो दुर्गादासवाले ज़रूर कहें, नहीं तो उनकी तौहीन होगी।

बिल्लेसुर की बाँहें खिल गईं। विनम्र भाव से कहा, माँ-बाप का कहना सभी मानते हैं, जैसी आज्ञा होगी, कहने में मुझे पेटराज़ न होगा।

सासजी ने तृप्ति की साँस छोड़ी। फिर बिल्लेसुर के पास परिडत बुला लाईं। परिडत ने शीघ्रबोध के अनुसार बनते हुए ब्याह की प्रशंसा की। बिल्लेसुर श्रद्धापूर्वक मान गये। अगली लगन में ब्याह होना निश्चित हो गया, और सासजी की आज्ञा के अनुसार उन्हीं के यहाँ से ब्याह होने की बात तैर रही। शाम को एक लड़की ले आई गई और दीये के उजाले में बिल्लेसुर ने उसे

देखा। उन्हें विश्वास हो गया कि कहीं कोई कलङ्क नहीं। हाथ-पैर के अलावा उन्होंने उसका मुँह नहीं देखा। उसकी अम्मा से देर तक बातचीत करते रहे। उन्हें ढाढस देकर गाँव की राह ली। रुपये मन्त्री की सास को दे आये।

(१७)

विल्लेसुर गाँव आये जैसे क़िला तोड़ लिया हो। गरदन उठाये घूमने लगे। पहले लोगों ने सोचा, शकरकन्दवाली मोटाई है। वाद को राज़ खुला। त्रिलोचन दाँत-काटी-रोटावाले मित्र सं मिले। वहाँ मालूम हुआ कि यह वही लड़की है, जिससे वह गाँठ जोड़ना चाहते थे। गाँव के रँडुओं और विल्लेसुर से ज़्यादा उम्रवाले क्वारों पर ब्याह का जैसे पाला पड़ा। त्रिलोचन ने विल्लेसुर के खिलाफ़ जली-कटी सुनाते हुए गरमी पहुँचाई; कहा, “ब्राह्मण है! — वाप का पता नहीं। किसी भलेमानस को पानी पिलाने लायक़ न रहेगा।” लोगों को दिलजमई हुई।

गाँव के बाजदार डोम और परजा विल्लेसुर को आ-आकर घेरने लगे। खुशामद की चार बातें सुनाते हुए कि घर की सूरत बदली, चिराग़ रौशन हुआ, साल भर में वाप-दादे का नाम भी जग जायगा, पहले सूने दरवाज़े से साँस लेकर निकल जाते थे, अब अड़े रहेंगे, कुछ लेकर टलंगे। विल्लेसुर को ऐसी गुदगुदी होती थी कि भुर्रियों में मुस्करा देते थे। सोचते थे, परजे नाक के बाल बन गये। पतले हाल की परवा न कर चढ़कर ब्याह करने की ठानी; लोग-हँसाई से डरे। परजे ऐसा मौक़ा छोड़कर कहाँ जायेंगे, सोचा, इन्हें कुछ लिया-दिया न गया तो रास्ता चलना दूभर कर देंगे, वाप-दादों से बँधी मेड़ कट जायगी। भरोसा हुआ कि ब्याह का खर्च निबाह लेंगे।

नाई रोज़ तेल लगाने और बाल बनाने को पूछने लगा। कहार एक रोज़ अपने आप आकर दो घड़े पानी भर गया। बेहना बत्ती बनाने के लिये रुई की चार पिंडियाँ दे गया। चमार आकर पूछ गया, व्याह के जोड़े नरी बनाये या मामूली। चौकीदार पासी रोज़ आधीरात को हाँक लगाता हुआ समझा जाने लगा कि पूरी रखवाली कर रहा है। गङ्गावासी एक दिन दो जनेऊ दे गया। एक दिन भट्टजी आये और सीता स्वयम्बर के कुछ कवित्त भूषण की अमृत ध्वनि सुना गये। गर्ज यह कि इस समय कोई नहीं चूका।

विल्लेसुर का पासा पड़ा। ज़मीन्दार ने उनकी देहली पर पैर रक्खा। सारा गाँव टूट पड़ा। ज़मीन्दार गये थे, व्याह हो रहा है, कम-से-कम दो रुपयं विल्लेसुर नज़र देंगे, फिर मदद के लिए पूछेंगे, कुछ इस तरह वसूल हो जायगा जैसे कानपुर से आटा-शकर मँगवायँगे तो बैल-गाड़ी के किराये के अलावा कुछ काट-कपट करा ही ली जा सकेंगी। त्रिलोचन भी ज़मीन्दार के साथ थे, सोचा था, उनके पीछे पूरी ताकत खर्च कर देंगे; कुछ हाथ लग ही जायेगा। त्रिलोचन को देखकर विल्लेसुर ने निगाह बदली। जब भी त्रिलोचन तथा दूसरों ने ज़मीन्दार के समन्दर पर बरसने के लिये विल्लेसुर को बहुत समझाया—“रिक्तपाणिर्न पश्येत राजानं देवतां गुरुम्。” फिर भी विल्लेसुर अपनी जगह से हिले नहीं, ज़मीन्दार के सम्मान में बैठे, दाँतों में तिनके-सा लिये रहे। कुछ देर बाद ज़मीन्दार मन मारकर उठ गये, त्रिलोचन पीछे लगे रहे। आगे बढ़कर अच्छी तरह कान भर दिये कि हुकम भर की दर है। गाँव में दूसरे दिन से विल्लेसुर की इज़त चौगुनी हो गई। ज़मीन्दार के घर जाने का मतलब लोगों ने लगाया, विल्लेसुर के हाथ कारूँ का खज़ाना लगा है। तरह-तरह

की मन-गढ़न्तें फेरिीं। किसी ने कहा, “सोने की ईंटें उठा लाया है, किसी से बतलाता नहीं, छिपा जोगी है, दो साल में देखो, गवां खरीदेगा।” किसी ने कहा, “महाराज के यहाँ से जवाहरात चुरा लाया है; लेकिन घर में नहीं रखे, बाहर कहीं घूरे में या पेड़ के तले गाड़ दिये हैं ताकि चोरों के हाथ न लगें।” ऐसी बात-बात जितनी बढ़ी, बिल्लेसुर के सामने लोगों की आँख उतनी ही झुकती गई। दूसरे गाँव के लोग भी दरवाजे से निकलते हुए बिल्लेसुर को पूछने लगे।

एक दिन नाई को बुलाकर बिल्लेसुर ने कहा, मन्त्री की ससुराल गोवर्द्धनपुर जाओ और कह आओ, ब्याह वरात ले जाकर करेंगे। लड़की को मन्त्री की सास बुला लें। उन्हीं के घर में खम गड़ेगा। बाकी यहाँ आकर समझ जायँ।

नाई कह आया। फिर नातेदारों के यहाँ न्यूता पहुँचाने चला— एक गाँठ हल्दी, एक सुपाड़ी और तेल-मयन-ब्याह के दिन ज़बानी। जितने मान्य थे, दोनों जगहों की विदाई की सोचकर मडलाने लगे।

बिल्लेसुर के बड़प्पन की बात के पर बढ़ चुके थे। वे अबसर नहीं चूके। दूसरे गाँव में गाड़ी माँगी। व्यवहार रखे रहने के लिये मालिक ने गाड़ी दे दी। बिल्लेसुर चक्की से गोहूँ पिसा लाये। गाँव की निटल्ली बेवाओं से दाल दरा ली। मलखान तेली को कापुर से शकर ले आने के लिये कहा। बाकी कपड़ा और सामान गाँव के जुलाहे, काछी, तेली, तम्बोली, डोम और चमारों से तैयार करा लिया। घर के लिये चिन्ता थी कि बकरियों में नातेदारों की गुज़र न होगी, वह भी दूर हो गई; सामने रहनेवाली चौधरी की बेवा ने

एक कोठरी अपने लिये रखकर बाक़ी घर छोड़ देने का पूरी उत्सुकता से वचन दिया—बिल्लेसुर की खुली क़िस्मत से उन्होंने भी शिरकत की।

नातेदार आने लगे, कुल-के-कुल बिल्लेसुर के पिता के मान्य यानी रुपये लेनेवाले। चौधरी के मकान में डेरा डलवाया गया तो चौकन्ने हुए। वकरियों का हाल मालूम कर खिंचे, फिर अलग रहने के कारण से खुश होकर, बाहर-ही-बाहर बरतौनी और विदाई लेकर कट जाने की सोचकर बाज़ी-सी मार बैठे।

अपने लिये ब्याह के कुल गहने कराठा, मोहनमाला, बजुल्ला, पहुँची, अँगूठी बिल्लेसुर मगनी माग लाये। मुरली महाजन को देने में कोई पेंतराज़ नहीं हुआ। वह भी बिल्लेसुर का माहात्म्य सुन चुका था। चढ़ाव का कुल ज़ेवर बिल्लेसुर ने चोरों से ख़रीदा रुपये में नफ़द दो आने क़ीमत चुकाकर। फिर साफ़ कराकर पटवे से गुहा लिये; कड़े-छड़े पायजेवें रहने दीं।

तेल के दिन डोमों के विकट वाद्य से गाँव गूँज उठा। बिल्लेसुर के अदृश्य वैभव का सब पर प्रभाव पड़ा। पड़ोस के ज़मीन्दार ठाकुर तहसील से लौटते हुए दरवाज़े से निकले। बिल्लेसुर को देखकर प्रणाम किया। कारूँ के खज़ाने की सोचकर कहा, “लोगों की आँख देखकर हम कुल भेद मालूम कर लेते हैं। ब्याह करने जा रहे हो, हमारा घोड़ा चाहो तो ले जाओ।” बिल्लेसुर ने राज़ दबाकर कहा, “हम गरीब ब्राह्मण, ब्राह्मण की ही तरह जायेंगे। आप हमारे राजा हैं, सब कुछ दे सकते हैं।” ठाकुर साहब यह सोचकर मुस्कराये कि खुलना नहीं चाहता, फिर प्रणाम कर विदा हुए।

मातृपूजन के दूसरे दिन वरात चली। कुआ पूजा गया। दूध विल्लेसुर की एक चाची ने पिलाया। पैर लटकाये देर तक कुएँ की जगत पर अड़ी बैठी रहीं। पूछने पर कहा, “सोने की एक ईंट लेंगे।” विल्लेसुर समझकर मुस्कराये। गाँववालों ने कहा, “बुरा नहीं कहा, आखिर और किस दिन के लिये जोड़कर रक्खा गई हैं?” विल्लेसुर ने कहा, “चाची, यहाँ तो निहत्था हूँ। पैर निकालो, लौटकर तुम्हें ईंट ही दूँगा।” चाची खुश हो गई। गाँववालों के मुँह पर हवाईयाँ उड़ने लगीं। उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि विल्लेसुर के सोने की पचासों ईंटें हैं।

वरात निकली। अगवानो, द्वारचार, ब्याह, भात, छोटा-बड़ा आहार, वरतीनी, चतुर्थी, कुल अनुष्ठान पूरे किये गये। वहाँ इन्हीं का इन्तज़ाम था। मान्य कुल मिला कर पाँच। वाक्री कहार, वाजदार, भैय्याचार। चार दिन के बाद दूल्हन लेकर विल्लेसुर घर लौटे। फिर अपने धनी होने का राज़ जीते-जी न खुलने दिया।

कुकुरमुत्ता

निरालाजी का निरालापन जितना इस संग्रह में झलकता है उतना और कहीं नहीं। इसकी भाषा में एक अनोखा चटपटापन है, जो निरालाजी के लिए भी नया है। जिन लोगों को शिकायत रही है कि निरालाजी कठिन कविता लिखते हैं, वे एक बार कुकुरमुत्ता की सादगी भी देखें। इन कविताओं की हिन्दी में इतनी चर्चा हो चुकी है कि उनके बारे में लिखना सूर्य को दीपक दिखाना है। मूल्य ॥३॥

अग्निमा

श्रीनिराला जी हिन्दी-संसार में भाषा और भावों में नये-नये प्रयोगों के करने के लिए प्रसिद्ध हैं। इस संग्रह में अनामिका के बाद के उनके सभी सुन्दर गीत और कविताएँ संग्रहीत हैं। निराला जी के साहित्य को समझने के लिए हिन्दी के प्रत्येक पाठक को एक प्रति इस काव्य-संग्रह की अपने पास अवश्य रखनी चाहिए। मूल्य १॥

भारतेन्दु-युग

लेखक—डा० रामविलास शर्मा, एम्० ए०, पी०एच० डी०

भारतेन्दु-युग से ही आधुनिक हिन्दी-भाषा और साहित्य का आरम्भ होता है। यह युग कितना सजीव और चेतन था, इसको बहुत कम लोग जानते हैं। इस पुस्तक में उस युग के पत्र-साहित्य, नाटक, उपन्यास, निबन्ध-रचना, भाषण, भाषा सम्बन्धी प्रचार आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है। भारतेन्दु-युग का ऐतिहासिक महत्व ही नहीं है, उससे आज के लेखकों को विशेष प्रेरणा मिलेगी। पुस्तक की शैली अत्यन्त रोचक है। मूल्य २॥

विहाग

लेखिका—श्रीमती सुमित्राकुमारी सिनहा

श्री सुमित्राकुमारीजी सिनहा की कविताओं का हिन्दी-संसार में यथेष्ट आदर और सम्मान का प्रमाण यही है कि अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने उनके विहाग नामक काव्य-संग्रह को सर्व-श्रेष्ठ ठहराकर ५००॥

का सेकसरिया पारितोषिक प्रदान किया है। प्रत्येक कविता-प्रेमी के लिए यह सुन्दर कलाकृति संग्रह हृद्य है। मूल्य १।।)

वर्षगांठ

लेखिका—श्रीमती सुमित्राकुमारी सिनहा

निरालाजी ने इस पुस्तक के प्राक्कथन में लिखा है—“आधुनिक रचना-शैली की वे (सुमित्राकुमारी सिनहा) पहली महिला हैं। रूढ़ियों की पवित्रता को चारदीवारी के बाहर उनकी निगाह गई है। प्रचलित जीवन के चित्रण उनकी रचनाओं में बड़ी खूबी से आये हैं। वे समय के साथ हैं.....जिससे समाज की सच्ची सूरत साहित्य में प्रतिफलित हुई है। यहाँ वे अपनी बहनों में अग्रगामी हैंपढ़ने पर एक प्रकार का नया साहस आता है। मूल्य केवल १।।)

अचल सुहाग

लेखिका श्रीमती सुमित्राकुमारी सिनहा

जितने प्रेम से श्रीमती सुमित्राकुमारीजी सिनहा का काव्य-साहित्य पढ़ा जाता है, उतने ही प्रेम से उनका कथा-साहित्य भी। यदि आप भावों की प्रभावोत्पादकता, वर्णन-शैली की मनोरंजकता और अनुभव की सत्यता देखना चाहें तो इस कहानी-संग्रह को अवश्य पढ़ें। मूल्य १।।)

वनस्पतिशास्त्र (सचित्र)

लेखक—डा० महेशचरण सिनहा एम० एस०सी०

इस विषय की यह पहली पुस्तक हिन्दी में है। इस विषय की जानकारी सभी किसानों, ज़मींदारों, तथा वैद्य, हकीमों के लिए आवश्यक है। इस शास्त्र के पढ़ने के लिए जितनी सुगमता हमारे देश में है, अन्य जगहों में नहीं, फिर भी अधिकतर लोग इससे अनभिज्ञ हैं। उन्हीं के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। विद्यार्थियों के लिए भी यह बड़ी उपयोगी है। इस पुस्तक को लिखकर स्वर्गीय लेखक ने एक बड़ी कमी को पूरा किया है। चित्र-संख्या २३० मूल्य केवल ३।।)

वनस्पति क्रिया विज्ञान

लेखक—डा० महेशचरण सिन्हा एम० एस-सी०

इस पुस्तक में Plant Physiology के विषय को हिन्दी में बड़े ही सरल ढंग से समझाया गया है। यह पुस्तक कई जगह पाठ्य-पुस्तक है। विद्यार्थियों के लिए बड़ी उपयोगी है। मूल्य केवल १।

रसायनशास्त्र (सन्नित्र)

लेखक—डा० महेशचरण सिन्हा एम० एस-सी०

यह पुस्तक उन लोगों के लिए लिखी गई है, जो हिन्दी-भाषा द्वारा रसायनशास्त्र की बातें, नियम, सिद्धान्त और उनके प्रयोग तथा मूल तत्वों को जानने की आकांक्षा रखते हैं। इसको पढ़कर हिन्दी जाननेवाले बड़ी-से-बड़ी विज्ञान सम्बन्धी बातों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। इसमें रसायन के उन सिद्धान्तों का जो कि इस विद्या के बड़े-बड़े विषयों के मूलाधार हैं, पूर्ण रूप से समझाया गया है। यह पुस्तक विद्यार्थियों के लिए भी अति उपयोगी है। पृष्ठ ४३२, चित्र ६१, मूल्य केवल ३।।

स्वतन्त्रता की कुञ्जी

लेखक—डा० महेशचरण सिन्हा एम० एस-सी०

इस पुस्तक में फूकीज़ावा के बताए उन समस्त साधनों का उल्लेख है, जिनके प्रयोग द्वारा जापान एक निर्बल एशियाई देश होते हुए एक महान् शक्ति बन गया। यदि आप भी अपने देश को शक्तिशाली तथा स्वाभिमानी बनाना चाहते हैं तो इस पुस्तक को अवश्य मंगाइये। मूल्य १।।

हमारे अन्य प्रकाशन

डा० महेशचरण सिन्हा एम० एस-सी० कृत

जार्ज वाशिंगटन (जीवनी)

मूल्य 1=)

विलियम वैलेस (जीवनी)

मूल्य 1।

विन्कल रीड (जीवनी)

मूल्य 2=)

